इकाई- 8 संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद

पाठ-संरचना

8.0 उद्देश्य

8.1 परिचय

8.2 संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद-ध्येय बिन्दु

8.3 हिन्दी में अनुवाद के प्रदर्श

8.4 सारांश

8.5 अभ्यास के प्रश्न

8.6 पठनीय ग्रंथ

८.० उद्देश्य

सामान्यतया अनुवाद को कठिन कार्य माना जाता है। अनुवादक से अपेक्षा होती है कि जिस भाषा से अनुवाद किया जा रहा है, उन दोनों भाषाओं की संरचना से अनुवादक परिचित हो। 'संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद' शीर्षक इस पाठ का उद्देश्य है कि अनुवादक को अनुवाद के लिए अपेक्षित बिन्दुओं से परिचित करा दिया जाय। यह तथ्य है कि प्रत्येक की संरचना का अपना वैशिष्ट्य होता है। अतः अनुवादक को 'मक्षिकास्थाने मक्षिका' ध्यान में रखकर अनुवाद नहीं करना चाहिए, अपितु भाषा विशेष की संरचना के अनुसार अनुवाद करने में सचेष्ट रहना चाहिए।

८.१. परिचय

संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद करने में किन बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए इसका विवेचन इस पाठ में किया गया है। भाषा की अपनी प्रकृति होती है इस बात का ध्यान रखते हुए संस्कृत से अनुवाद करना चाहिए। उल्लेखनीय है कि संस्कृत क्रिया रूपों में लिङ्ग जनित भेद नहीं होता, जबकि हिन्दी क्रियारूपों में लिङ्ग का ध्यान रखना पड़ता है। दूसरे वचन के सम्बन्ध में भी यह ध्यान रखना है कि हिन्दी में द्विवचन नहीं होता, वहाँ पर बहुवचन का ही प्रयोग किया जाता है। संस्कृत में समस्त पदावली की अधिकता होती है, अतः ऐसे पदों का अनुवाद करते समय छोटे-छोटे वाक्यों में लिखा जा सकता है। अनुवाद करते समय मक्षिका स्थाने मक्षिका बात नहीं होनी चाहिए, किन्तु इसका ध्यान रखना चाहिए कि अनुवाद भावानुवाद नहीं हो जाय।

संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद ध्येय बिन्दु–किसी भाषा के शब्दार्थ को दूसरी भाषा के शब्दों में लिखने को अनुवाद कहते है। दूसरे शब्दों में 'अनुवाद का अर्थ भाषान्तर में लिखना है। व्युत्पत्ति के अनुसार अनु=पश्चात् विद्+घञ्=वाद कहना; किसी बात को फिर से कहना अर्थात् किसी बात को अन्य शब्दों में बदल करके कहना अनुवाद है। इस यौगिक अर्थ के अनुसार अनुवाद एक भाषा से उसी भाषा में हो सकता है, किन्तु लोकव्यवहार में अनुवाद

शब्द का योगरुढ़ अर्थ ही प्रसिद्ध है, किसी भाषा के परिच्छेद को दूसरी भाषा में बदलना।

किसी भाषा को दूसरी भाषा में सही–सही अनुवाद करने के लिए एक विशेष दक्षता की आवश्यकता होती है। साथ ही अनुवादकर्ता को सम्बद्ध भाषाओं का शब्द भाण्डार और व्याकरण का सम्यक् ज्ञान रहना चाहिए। अनुवाद करते समय अनुवादक को अनुवाद के नियमों का ध्यान रखना चाहिए।

भाषान्तर भावान्तर नहीं है, अतः यथा संभव अनुवाद में मूलार्थ को सुरक्षित रखने का प्रयास करना चाहिए। अतः अनुवाद यथासम्भव अनुरूप अर्थात् मूलार्थ का यथाशब्द पुनर्लेखन होना चाहिए। कोई–कोई अनुवादक तात्पर्यभाव लिखकर मूलार्थ को संक्षिप्त कर देते हैं और कोई–कोई पल्लवन का आश्रय लेकर उसे अत्यधिक विस्तृत कर देते हैं। ये दोनों ही प्रवृत्तियों उचित नहीं है। अनुवाद की एकमात्र विशेषता अनुरूपता है। वहाँ संक्षेपीकरण अथवा पल्लवन के लिए अवकाश नहीं है। अनुवाद भाषान्तरमात्र है—न संक्षेपीकरण, न विशदीकरण ।

अनुवाद में मूल के भावों तथा विचारों के अतिरिक्त मूल लेखक की शैली की भी रक्षा अपेक्षित है। भावाभिव्यक्ति के अपने–अपने ढंग होते हैं। इसी निजी ढंग को शैली कहते है। शैली में परिवर्तन मूल के भाव–सौन्दर्य को नष्ट कर देता है। अनुवाद से भाव सौन्दर्य में कुछ व्यवधान तो अवश्य होता है, तथापि जिस अनुवाद में मूल के भावों और शैली की जितनी अधिक रक्षा होगी, वह उतना ही अच्छा अनुवाद होगा।

अनुवादक के लिए स्पृहणीय है कि मूल अवतरण के वाक्य अनुवाद में भी उसी क्रम में हो अर्थात् मूल के वाक्यों के कर्त्ता, कर्म, क्रिया, विराम चिह्न आदि के स्थानक्रम में अनुवाद में परिवर्तन न हो या यथासम्भव कम से कम परिवर्तन हो। यद्यपि ऐसा होना असम्भव है इसका कारण है कि प्रत्येक भाषा का अपना प्रवाह अर्थात् वाक्य–योजना की रीति होती है। यथा–Ram is going to school या Ram has beaten shyam वाक्यों में स्पष्ट है कि पहले वाक्य में क्रिया पहले आ रही हैं और कर्म अन्त में और दूसरे वाक्य में भी क्रिया पहले प्रयुक्त हो रही है और कर्म बाद में, किन्तु इसका हिन्दी अनुवाद होगा—राम विद्यालय जा रहा है और दूसरे वाक्य का अनुवाद होगा—राम ने श्याम को पीटा। इन दोनों वाक्यों में कर्म पहले प्रयुक्त हो रहा है और क्रिया बाद में । यदि अंग्रेजी वाक्य के शब्द–क्रम का निर्वाह करें, तो हिन्दी रूपान्तर होगा–राम है जा रहा स्कूल तथा द्वितीय वाक्य का रूपान्तर होगा–राम ने है पीटा श्याम को। यह रूपान्तर शुद्ध नहीं है, क्योंकि यह हिन्दी की वास्तविक वाक्य–संरचना के अनुकूल नहीं है। अतः हिन्दी अनुवाद में मूल के वाक्यों को हिन्दी वाक्यों की रीति को अनुसार लिखना अपेक्षित है। संस्कृत भाषा में भी अनुवाद के समय इन विषयों पर ध्यान रखना आवश्यक है। उपर्युक्त दोनों वाक्यों का संस्कृत रूपान्तरण क्रमशः 'रामः विद्यालयम् गच्छति' तथा 'रामः श्यामं ताडयति' होगा। इन दोनों वाक्यों में भी कर्ता, कर्म तथा अन्त में क्रिया का प्रयोग है। संस्कृत वाक्य में पद क्रम मुक्त रहता है। लम्बे और जटिल, समासयुक्त वाक्यों का वैसे ही अनुवाद करना प्रायः कठिन होता है। संस्कृत में यह कठिनाई अधिक है क्योंकि प्राचीन संस्कृत लेखकों ने समास–शैली का अधिक प्रयोग किया है। अतः इस प्रकार

के वाक्यों के अनुवाद में अनावश्यक रूप से जटिलता एवं शिथिलता के आने की सम्भावना बनी रहती है। इस जटिलता या शिथिलता से बचना अनुवादक के लिए आवश्यक है। इसके लिए यदि बड़े और जटिल वाक्यों को तोड़कर सरल वाक्यों में परिणत करना पड़े, तो ऐसा करना श्रेयस्कर है, किन्तु मूल की शैली की यथासम्भव रक्षा करनी चाहिए।

जहाँ शाब्दिक अनुवाद से अर्थ हानि हो अर्थात् पूरा अर्थ न निकले वहां भावानुवाद वरेण्य है। संस्कृत के सुभाषितों के अनुवाद में ऐसी कठिनाई प्राय: आती है।

सबसे बड़ी समस्या है मुहावरों और लोकोत्तियों या कहावतों के अनुवाद में; क्योंकि इनका शाब्दिक या प्रत्यक्ष अर्थ नहीं होता है। इनका वास्तविक अर्थ शाब्दिक या प्रत्यक्ष अर्थ से भिन्न होता है। अत: इस प्रकार के अनुवाद में एक भाषा में व्यवहृत मुहावरों, लोकोक्तियों को दूसरी भाषा के समानार्थी व्यवह्रत मुहावरों में बदलना चाहिए। यथा–एकता महान् शक्ति है का आंग्ल अनुवाद 'Unity is strength' तथा संस्कृत अनुवाद 'संघे शक्ति:' होगा। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं–

(1) कष्ट: खलु पराश्रय: (पराधीन सपनेहुं सुख नाहीं)
Dependence is indeed painfull.

(2) को धर्म: कृपया बिना (दया धर्म का मूल है)
No pity withont mercy.

(3) बालानां रोदनं बलम् (बालक का बल रोना है)
Crying is the only strength of child.

(4) दूरस्था: पर्वता रम्या: (दूर के ढोल सुहावने)
Distance lends enchancement of the viewed

(5) अर्थमनर्थं भावय नित्यम् (दौलत का नशा बुरा होता है)
Wealth is the root of all calamities.

शासनात् करणं श्रेय:/वाच: कर्मातिरिच्यते = कहने से करना अच्छा है।

कतिपयदिवसस्थायिनी यौवनश्री: = जवानी की शोभा बहुत कम दिन रहती है।

मनुष्या: स्खलनशीला: = भूल होना मनुष्य का स्वभाव है।

सुखमुपदिश्यते परस्य = दूसरे को उपदेश देना सरल है।

धारासारैर्महती वृष्टिर्बभूव = मूसलाधार वर्षा हुई।

गण्डस्योपरि स्फोट: = एक दु:ख के ऊपर दूसरा दु:ख होना।

गुणा विनयेन शोभन्ते = गुणों की शोभा नम्रता से होती है।

अमुष्य विद्या रसनाग्रनर्तकी = विद्या उसके जिह्वा पर थी।

त्रिशंकुरिवान्तरा तिष्ठ = त्रिशंकु के समान लटके रहो।

त्वामहं तृणाय मन्ये = मैं तुम्हें तिनके के समान समझता हूँ।

अक्षिगतोऽहं तस्य	=	मैं उसकी आखों की किरकिरी हूँ।
अये, सम्यगनुबोधितोऽस्मि	=	अरे, आपने तो अच्छी याद दिलाई।
वरं मृत्युर्न पुनरपमानः	=	अपमान से मौत अच्छी है।
हृदयंगमः परिहासः	=	मनोहर हास्य
इतो भ्रष्टस्ततो नष्टः	=	धोबी का कुत्ता न घर का घाट का
गतस्य शोचनं नास्ति	=	बीती ताहि विसार दे
कस्यात्यन्तं सुखमुपनतम्	=	हर रोज ईद कहाँ ?/ Christmas comes
दु:खमेकान्ततो वा	=	but once a year
उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः	=	परिश्रम सफलता की कुंजी है।
विषकुम्भं पयोमुखम्	=	मुंह में राम बगल में छुरी
गतः कालो न चायाति	=	गया वक्त फिर हाथ नहीं आता।
अतिदर्पे हता लङ्का	=	घमण्डी का सिर नीचा/अति कभी भी अच्छा नहीं होता।
दैवे विपरीते गते तृणमपि वज्रायते	=	भाग्य के विपरीत होने पर क्षुद्र भी प्रायः ताकत दिखलाता है।

इस प्रकार लोकोक्तियों, कहावतों एवं मुहावरों में शाब्दिक अर्थ को छोड़कर लाक्षणिक अर्थों का ग्रहण भी होता है। अतः शाब्दिक अर्थानुवाद सोच विचार कर करना चाहिए। संस्कृत वाक्य विन्यास में विशेषण की विभक्ति विशेष्य के अनुरूप होती है, परन्तु हिन्दी वाक्य विन्यास में ऐसा नियमतः नहीं होता है। कभी-कभी अपवाद देखने में आता है। यथा-

राज्ञः दशरथस्य तिस्रः राज्यः आसन् में राजः की विभक्ति दशरथ के अनुरूप है तथा इन विशेषणों में क्रमशः षष्ठी एकवचन (पुँल्लिङ्ग) तथा प्रथमा बहुवचन (स्त्रीलिङ्ग) के रूप हैं। हिन्दी में इनके अनुवाद में राजा और तीन में कोई विभक्ति दीख नहीं पड़ती है। 'राजा दशरथ की तीन रानियाँ थी।

'तासु कौशल्या ज्येष्ठा आसीत्' इस वाक्य में तासु में (सप्तमी बहुवचन) लिङ्ग तथा ज्येष्ठा में (प्रथमा एकवचन) के रूप स्त्रीलिङ्ग हैं; परन्तु इनके हिन्दी अनुवाद में (उनमें कौसल्या ज्येष्ठ थी) 'उनमें' और 'ज्येष्ठ' के स्त्रीलिंग रूप का प्रयोग नहीं होता है।

भारतस्य उत्तरस्यां दिशि नगाधिराजः हिमालयः अस्ति। यहाँ दिशि स्त्रीलिङ्ग सप्तमी एकवचन का रूप है इसी के आधार पर उत्तरस्यां भी सप्तमी एकवचन स्त्रीलिंग रूप है। हिन्दी अनुवाद में उत्तर शब्द में सप्तमी विभक्ति तथा स्त्रीलिङ्ग का रूप प्रयुक्त नहीं होगा। यथा भारत की उत्तर दिशा में नगाधिराज हिमालय है। यहां इस वाक्य में उत्तर शब्द में स्त्रीलिङ्ग और अधिकरण का प्रयोग नहीं हुआ है।

संस्कृत के निम्नलिखित वाक्यों 'रामः पुस्तकं पठितवान् अथवा रामः पुस्तकं अपठत् (कर्तृवाच्य) के हिन्दी अनुवाद में 'ने' का प्रयोग कर्ता के परसर्ग के रूप में आवश्यक है। यथा-इस वाक्य को हिन्दी अनुवाद होगा-राम ने पुस्तक पढ़ी (कर्मवाच्य) भूतकाल में

सकर्मक क्रियाओं के प्रयोग होने पर 'ने' का प्रयोग होता है तथा क्रिया कर्मवाच्य में होती है अर्थात् संस्कृत से हिन्दी अनुवाद करते समय कर्म के लिङ्ग, वचन, कारक का भी ध्यान रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त विशेषण विशेष्य सम्बन्ध को ध्यानपूर्वक समझ कर अनुवाद करना चाहिए।

निम्नलिखित संस्कृत वाक्यों के हिन्दी वाक्यों पर ध्यान दें, तो स्पष्ट हो जाएगा कि हिन्दी विशेषण में नियम की एकरूपता नहीं है अर्थात् विशेषण पुल्लिङ्ग या स्त्रीलिङ्ग दोनों में हो सकते हैं। यथा–

सुन्दरः बालकः गच्छति।
सुन्दरी बालिका गच्छति।
सुन्दरम् वस्त्रम् आनयति।

सुन्दर बालक जाता है
बालिका जाती है
वस्त्र लाता है

स्पष्ट है कि हिन्दी अनुवाद में सुन्दर के रूप में कोई परिवर्तन नहीं होता है, परन्तु सुन्दर के स्थान पर मोटा का प्रयोग करें, तो स्त्रीलिङ्ग रूप लिखना पड़ेगा।

मोटा बालक जाता है
वस्त्र लाता है
मोटी लड़की जाती है

ध्यातव्य है कि संस्कृत के तिङन्त क्रियारूपों में लिङ्ग सम्बन्धी अन्तर नहीं होता, परन्तु कृदन्त क्रियारूपों में लिङ्ग का अन्तर दीख पड़ता है। नीचे के वाक्यों को देखें। यथा–

रामः पुस्तकं (अपठत् / पठितवान्)
सीता पुस्तकं (अपठत् / पठितवती)
मम मित्रं पुस्तकं (अपठत् / पठितवत्)

उल्लेखनीय है कि संस्कृत में दोस्त के अर्थ में 'मित्र' पद नपुंसकलिङ्ग होता है अतः कृदन्त क्रियारूप भी नपुंसकलिङ्ग ही रहेगा।

८.३. हिन्दी में अनुवाद के प्रदर्श

(१) अस्मात् अनेकाः नद्यः प्रभवन्ति।
सीतया सह लक्ष्मणोऽपि वनं जगाम।
दस्युभ्यः सर्वे जनाः बिभ्यन्ति।
सः श्वः पाटलिपुत्रात् गृहमागमिष्यति।
मह्यं दधि अति रोचते।
रमेशः रजकस्य वस्त्रम् ददाति।
जटाभिस्तापसाः ते प्रतीयन्ते।

अनुवाद इससे अनेक नदियां बहत्री हैं।
सीता के साथ लक्ष्मण भी वन गये।
डाकुओं से सब डरते हैं।
वह कल पाटलिपत्र से घर आयेगा।
मुझे दही बहुत अच्छा लगता है।
रमेश धोबी को कपड़ा देता है।
जटाओं से वे तपस्वी मालूम पड़ते हैं।

(२) काशी हिन्दुजनानां पवित्रं तीर्थस्थानं अस्ति।
तत्र विश्वनाथस्य प्राचीनं मन्दिरम् अस्ति।
छात्राः क्रीडां द्रष्टुम् धावन्तः अगच्छन्।
महात्मा गांधी भारतस्य नेतणां नेतृत्वं कृतवान्।
कालिदासस्य काव्येषु उपमायाः प्रधानता अस्ति।

अनुवाद काशी हिन्दुओं का पवित्र तीर्थ स्थान है।
वहां विश्वनाथ का प्राचीन मन्दिर है।
विद्यार्थी खेल देखने के लिए दौड़ कर गए।
महात्मा गांधी ने भारत के नेताओं का नेतृत्व किया।
कालिदास के काव्यों में उपमा की प्रधानता है।

(३) छात्रा अनुशासिता भवेयुः।
अनुशासनं राष्ट्रं महत् करोति।
परिश्रमेण विद्या भवति।
सीता ह्यः तत्र गच्छति स्म।
ज्ञानं बहु पवित्रं भवति।
संस्कृतं देवभाषा अस्ति।

अनुवाद छात्रों को अनुशासित रहना चाहिए
अनुशासन देश को महान् बनाता है।
परिश्रम से विद्या होती है।
सीता कल वहाँ गई थी।
ज्ञान बहुत पवित्र होता है।
संस्कृत देवभाषा है।

४. अस्माकं देशः भारतवर्षः अस्ति। अयं हि हिमालयात् रामेश्वरम् पर्यन्तम् पुरीतः द्वारकापर्यन्तं प्रसृतः अस्ति। अत्र गंगा, यमुना, गोदावरी ब्रह्मपुत्र–प्रभृतयः नद्यः अमृतोपम् तोयं वहन्ति। अत्र काशी–प्रयाग–मथुराप्रभृतयः तीर्थनगराणि सन्ति। अत्र कलकत्ता–मुम्बई–मद्रास–कानपुर–दुर्गापुर–राउरकेला प्रभृतयः उद्योगप्रधानाः नगर्याः सन्ति। अत्रैव राम–कृष्ण–गौतमाः जाताः। गांधी–नेहरु–पटेल–प्रमुखाः महापुरुषाः अत्रैव उत्पन्नाः। अयं देशः

ग्रामप्रधानः कृषिप्रधानश्च कथ्यते। अस्य देशस्य राष्ट्रभाषा हिन्दी अस्ति या संस्कृतभाषायाः आत्मजा अस्ति।

अनुवाद– हमारा देश भारतवर्ष है। यह हिमालय से लेकर रामेश्वर और पुरी से द्वारका तक फैला हुआ है। गंगा, यमुना, गोदावरी, ब्रह्मपुत्र प्रभृति नदियां अमृत के समान जल धारण करती हैं। यहाँ काशी–प्रयाग–मथुरा आदि तीर्थ स्थान हैं। यहाँ कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, कानपुर, दुर्गापुर, राउरकेला प्रभृति उद्योगप्रधान नगर हैं। यहीं राम, कृष्ण गौतम का जन्म हुआ था। गांधी, नेहरु, पटेल आदि प्रमुख महापुरुष यहीं जन्मे थे। यह देश ग्राम प्रधान और कृषिप्रधान कहा जाता है। इस देश की राष्ट्रभाषा हिन्दी है जो संस्कृत भाषा की पुत्री है।

५. कश्मीरः भारतस्य उत्तरस्यां दिशि अस्ति। कश्मीरस्य संस्कृतिः भारतस्यैव वर्तते। न तु पाकिस्तानस्य न वा कस्यचिदन्यस्य देशस्य। अत्र पुरा संस्कृतभाषायाः अधिकः प्रचारः आसीत्। अत्रत्या विद्वांसः सम्पूर्णभारते प्रसिद्धाः आसन्। तैः रचितं साहित्यं संस्कृतस्य गौरवमस्ति।

अनुवाद– काश्मीर भारत की उत्तर दिशा में है। काश्मीर की संस्कृति भारत की ही है, न तो पाकिस्तान की या न किसी अन्य देश की। यहाँ पहले संस्कृत भाषा का अधिक प्रचार था। यहाँ के विद्वान् समस्त भारत में प्रसिद्ध थे। उनके द्वारा रचित साहित्य संस्कृत के गौरव हैं।

६. अस्माकं देशः कृषिप्रधानः। अस्मिन् देशे प्रतिशतम् अशीतिः जनाः कृषिकार्यं कुर्वन्ति। अतः कृषकाः एव भारतस्य प्राणाः सन्ति। ते परिश्रमेण अन्नमुत्पादयन्ति। तदन्नं भुक्त्वा देशः जीवनं धारयति। ते प्रातःकाले एव स्कन्धे हलं निधाय क्षेत्रं गच्छन्ति। तत्र कठिनं श्रमं कुर्वन्ति।

अनुवाद–हमारा देश कृषिप्रधान है। इस देश में सौ में अस्सी लोग खेती का कार्य करते हैं। अतः किसान ही भारत के प्राण हैं। वे परिश्रम से अन्न उपजाते हैं। उस अन्न को खाकर देश जीवन धारण करता है। वे प्रातःकाल ही कन्धे पर हल रखकर खेत जाते हैं। वहाँ कठोर परिश्रम करते हैं।

७. पुराणेषु कथा अस्ति यत् एकदा धर्मसत्ययोः परस्परं विवादोऽभवत्। धर्मोऽब्रवीत्–'अहं बलवान्', सत्यम् अवदत् 'अहम्' इति। अन्ते निर्णयाय तौ सर्पराजस्य समीपे गतौ। तेनोक्तं 'यः पृथ्वीं धारयेत् स एव बलवान् भवेदिति।' अस्यां प्रतिज्ञायां धर्माय पृथ्वीं ददौ। स हि धर्मो व्याकुलोऽभवत्। पुनः सत्याय ददौ। सत्यं कतिपययुगानि यावत् पृथ्वीमुदस्थापयत्।

अनुवाद– पुराणों में कथा है कि एकबार धर्म और सत्य में परस्पर विवाद हुआ। ध र्म ने कहा–'मैं बलवान् हूँ' सत्य ने कहा 'मैं'। अन्त में फैसला कराने के लिए वे दोनों सर्पराज के समीप गये। उन्होनें कहा कि 'जो पृथ्वी को धारण करे वही बलवान्'। इस प्रतिज्ञा पर धर्म को पृथ्वी दी तो धर्म व्याकुल हो गये। फिर सत्य को दी। उसने कई युग तक पृथ्वी को उठा कर रखा।

८. कस्मिंश्चिन्नगरे कश्चित् स्वभावकृपणो एकः ब्राह्मणः प्रतिवसति स्म। तेन भिक्षार्जितैः सक्तुभिर्भुक्तशेषैः कलशः संपूरितः। तं च घटं नागदन्तेऽवलम्ब्य तस्याऽधस्तात्खट्वां निधाय सततमेकदृष्ट्या तमवलोकयति। अथ कदाचिद्रात्रौ सुप्तश्चिन्तयामास यत् परिपूर्णोऽयं

घटस्तावत्सक्तुभि:वर्तते। तद्यदि दुर्भिक्षं भवति, तदनेन रुप्यकाणां शतमुत्पत्स्यते। ततस्तेन मया अजाद्वयं क्रेयम्। ततः षाण्मासिकप्रसववशात् ताभ्यां यूथम् भविष्यति। ततोऽजाभिः प्रभूता गाः क्रेष्यामि, गोभिश्च महिषाः, महिषैः अश्वा भविष्यन्ति। तेषां विक्रयात् प्रभूतं सुवर्णं भविष्यति। पुनः सुवर्णेन चतु:शालं गृहं सम्पत्स्यते।'

अनुवाद– किसी नगर में कोई स्वभाव से कंजूस ब्राह्मण रहता था। उसने भिक्षा से अर्जित तथा भोजन से बचे सत्तू से अपने घड़े (पात्र) को भर लिया था। उस घड़े को खूंटी में टांगकर उसके नीचे खटिया रखकर सदैव एकटक देखता रहता था। तब कभी रात में सोते हुए सोचने लगा–'यह घड़ा सत्तू से भर चुका है। तब यदि अकाल पड़ जाय तो इससे सौ रुपये मिल जायेंगे। तब उन रुपयों से मैं दो बकरियां लूँगा। तत्पश्चात् उनके हर छः मास पर प्रसव होने पर बकरियों का झुण्ड हो जाएगा। पुनः उन बकरियों से बहुत गायें खरीदूँगा। गायों से भैंसें और भैसों से घोड़े हो जायेंगे। उनके बेचने से बहुत सोना होगा। पुनः सोने से चार कमरेवाला घर होगा।

९. अधुना संसारे विज्ञानस्य महान् प्रचारः अभवत्। अनेके प्राचीनाः सिद्धान्ताः खण्डिताः नवीनाः सिद्धान्ताः सर्वत्र प्रचारं प्राप्तवन्तः। नवाः नवाः आविष्काराः प्रादुर्भूताः। विद्युदाकाशवाणी–दूरदर्शन– दूरभाषादीनि बहूनि वस्तूनि आविष्कृतानि सन्ति। विज्ञानम् अद्यतनसभ्यतायाः मूलं विद्यते।

अनुवाद–सम्प्रति विश्व में विज्ञान का बहुत प्रचार हुआ। अनेक प्राचीन सिद्धान्तों का खण्डन तथा नवीन सिद्धान्तों का सर्वत्र प्रचार हुआ। नये–नये आविष्कारों ने जन्म लिया। विद्युत्, आकाशवाणी (रेडियो), दूरदर्शन, दूरभाष (टेलीफोन) आदि बहुत वस्तुओं का आविष्कार हुआ। विज्ञान आधुनिक सभ्यता का मूल है।

१०. हिन्दीभाषा भारतस्य राष्ट्रभाषा वर्त्तते। इयमेव आंग्लभाषायाः स्थानमधिगृह्य देशस्य गौरवं रक्षिष्यति। हिन्दीभाषा सरला, सरसा व्यवहारयोग्या चास्ति। सर्वसाधारणो जनः शीघ्रमेव एतां अवगमिष्यति। भारतीयेषु अधिकतमाः जनाः इमामेव भाषां वदन्ति लिखन्ति च।

अनुवाद– हिन्दी भाषा भारत की राष्ट्रभाषा है। यही अंग्रेजी भाषा का स्थान ग्रहण कर देश के गौरव की रक्षा करेगी। हिन्दी भाषा सरल, सरस एवं व्यवहार के योग्य है। सामान्य लोग इसे शीघ्र पढ़ेंगे। भारत के अधिकांश लोग इसी भाषा में बोलते एवं लिखते हैं।

११. संसारे अनेकाः भाषा प्रचलिताः सन्ति। तासु संस्कृत–भाषा अति प्राचीना अस्ति। विश्वस्य प्राचीनतमम् साहित्यम्–वेदाः, उपनिषदः च अस्याम् भाषायाम् एव सन्ति। अस्माकं धार्मिक–ग्रन्थाः, कथा–ग्रन्थाः, नाटक–ग्रन्थाः च संस्कृत–भाषायामेव निबद्धाः। संस्कृतभाषायाः व्याकरणम् पाणिनिप्रणीता अष्टाध्यायी नाम तु सर्वत्र प्रसिद्धम्। आधुनिके युगे संगणकस्य क्षेत्रे अपि संस्कृतस्य महत्त्वं स्वीक्रियते।

अनुवाद– विश्व में अनेक भाषाएँ प्रचलित हैं। उनमें संस्कृत भाषा सबसे पुरानी है। विश्व के प्राचीनतम साहित्य वेद और उपनिषद् इसी भाषा में हैं। हमारे धार्मिक ग्रन्थ, कथा–ग्रन्थ और नाट्य ग्रन्थ संस्कृत भाषा में ही लिखे गए हैं। संस्कृत भाषा ही भारत की भाषाओं की जननी है। संस्कृत भाषा का व्याकरण पाणिनिरचित अष्टाध्यायी सर्वत्र प्रसिद्ध है। आधुनिक युग में संगणक (कम्प्यूटर) के क्षेत्र में भी संस्कृत का प्रयोग होता है।

१२. हिमालयस्य शोभा अतीव मनोहारिणी विद्यते। कुत्रचित् लतापुष्पवेष्टितो वनप्रदेशः, क्वचित् तपोभूमयः सन्ति। अस्य दक्षिणस्यां दिशि बिहारप्रदेशः अस्ति। तस्मिन् प्रदेशे राजगृहम्, पावापुरी, बोधगया, हरिहरक्षेत्रम् च प्रसिद्धानि स्थानानि सन्ति। बिहारप्रदेशे अनेकानि उद्योगस्थानानि विद्यन्ते।

अनुवाद–हिमालय की शोभा अत्यन्त मनोहारिणी है। कहीं लता और पुष्पों से आवेष्टित वन है और कहीं तपोवन हैं। इसकी दक्षिण दिशा में बिहार प्रदेश है। उस प्रदेश में राजगीर, पावापुरी, बोधगया और हरिहरक्षेत्र प्रसिद्ध स्थान हैं। बिहार प्रदेश में अनेक औद्योगिक स्थान हैं।

१३. पुरा मथुरायाम् एकः नृशंसः नृपतिः अभवत्। तस्य नाम कंसः आसीत्। तस्य एका भगिनी देवकी आसीत्। वसुदेवेन सह देवक्याः विवाहः अभवत्। प्रस्थानकाले आकाशवाणी अभवत् 'देवक्याः पुत्रः कंसस्य घातकः भविष्यति।' तदा कंसः देवकीम् वसुदेवम् च कारागारे अक्षिपत्। कंसः तस्याः नवजातान् शिशून् सदैव अमारयत्। परं यदा कारागारे श्रीकृष्णः उत्पन्नः तदा भाद्रपदमासस्य कृष्णपक्षस्य अष्टमी तिथिः आसीत्। वसुदेवः तं शिशुं रात्रौ गोकुलमनयत्। अयम् श्रीकृष्णः एव पश्चात् कंसम् अमारयत्। तस्य जन्मोत्सवः एव जन्माष्टमी इति अभिध ानेन प्रसिद्धः अभवत्।

अनुवाद– प्राचीन काल में एक अत्याचारी राजा हुआ। उसका नाम कंस था। उसकी एक बहन देवकी थी। वसुदेव के साथ देवकी का विवाह हुआ था। विदा की वेला में आकाशवाणी हुई–देवकी का पुत्र कंस को मारनेवाला होगा। तब कंस ने देवकी और वसुदेव को कारागार (जेल) में डाल दिया। उसके नवजात शिशुओं को सदैव मार देता था। किन्तु जब कारागार में श्रीकृष्ण का जन्म हुआ उस दिन भादो महीने के कृष्णपक्ष की अष्टमी तिथि थी। वसुदेव कृष्ण को रात में गोकुल ले गए। उसी कृष्ण ने बाद में कंस को मारा। उनका जन्मोत्सव ही जन्माष्टमी के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

१४. तस्मिन्नेव काले कश्चित् महाकायः भीषणः भल्लूकः तयोः मित्रयोः दृष्टिपथम् आयातः। तयोः एकः तु कृश आसीत् अतः स शीघ्रमेव समीपस्थम् वृक्षम् आरूढः। द्वितीयः तु स्थूलत्वात् पलायितुम् वृक्षम् आरोढुं वा समर्थः न अभवत्। अतः तत्र एव मृतवत् स्थितः, यतः स श्रुतवान् आसीत् यत् भल्लुकः मृतं जीवं न स्पृशति। भल्लूकः भूमौ पतितं पुरुषं घ्रात्वा मृतं च ज्ञात्वा तं परित्यज्य अन्यत्र गतः।

अनुवाद– उसी समय कोई विशालकाय भयङ्कर भालू उन दोनों मित्रों के दृष्टिपथ में आया। उन दोनों में से एक मित्र दुबला(पतला) था, अतः वह शीघ्र ही नजदीक के पेड़ पर चढ़ गया। दूसरा मोटा होने के कारण न तो भागने में समर्थ था और न पेड़ पर चढ़ने में; अतः वह वहीं पर मृतवत् पड़ गया, क्योंकि उसने सुन रखा था कि भालू मरे हुए जीव को नहीं छूता है। भालू भूमि पर गिरे पुरुष को सूँघकर और मरा हुआ जानकर उसे छोड़कर दूसरी जगह चला गया।

१५. देशरत्नडाक्टरराजेन्द्रप्रसादस्य जन्म बिहारे सीवानमण्डलस्य जीरादेईनामके ग्रामे अभूत्। तस्य पितुः नाम महादेवसहायः आसीत्। सः छपरा–जिलास्कूलनाम्नि विद्यालये पठित्वा

कलकत्ताविश्वविद्यालयस्य इन्ट्रेन्सपरीक्षायां सर्वोत्तमं स्थानं प्राप्तवान्। ततः विधिविषये एम० एल० इति उपाधिं प्राप्य पटनायाः उच्चन्यायालये प्राड्विवाककर्म आरब्धवान्।

अनुवाद– देशरत्न डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद का जन्म बिहार में सीवान मण्डल के जीरादेई नामक ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम महादेव सहाय था। उन्होंने छपरा जिला स्कूल नामक विद्यालय में पढ़कर कलकत्ता विश्वविद्यालय की प्रवेशिका परीक्षा (इन्ट्रेन्स परीक्षा) में प्रथम स्थान प्राप्त किया। इसके पश्चात् विधि विषय में एम० एल० की उपाधि प्राप्त कर पटना उच्चन्यायालय में वकालत का कार्य शुरु किया।

१६. पत्रलेखनस्य ज्ञानं छात्राणां कृते परमावश्यकं भवति। पदे पदे अस्य आवश्यकता अस्माभिः अनुभूयते। पत्राणि विविध-विषयका भवन्ति व्यावसायिकम्, कार्यालयीयम्, व्यक्तिगतम् च। स्वपितरं, मातरं, भ्रातरं, पितृव्यादीन् प्रति अनेकानि पत्राणि प्रतिदिनं लिख्यन्ते अस्माभिः। अतएव पत्रलेखनस्य अभ्यासः नित्यं कर्त्तव्यः।

अनुवाद– पत्र लेखन का ज्ञान छात्रों के लिए नितान्त आवश्यक है। हम कदम कदम पर इसकी आवश्यकता का अनुभव करते हैं। पत्र अनेक विषयों के होते हैं—व्यवसाय सम्बन्धी, कार्यालय सम्बन्धी और व्यक्तिगत। हमलोग अपने पिता, माता, भाई तथा चाचा आदि को अनेक प्रकार के पत्र प्रतिदिन लिखते हैं। अतः पत्रलेखन का अभ्यास प्रतिदिन करना चाहिए।

१७. अस्माकं देशस्य सर्वासु नदीषु गङ्गा अतिश्रेष्ठा प्रधाना पवित्रा च नदी अस्ति। नदीयं हिमवतः अवतीर्य बंगसागरे पतति। अस्याः तटे अनेकानि नगराणि स्थितानि सन्ति। पाटलिपुत्रं तेषु नगरेषु विख्यातं प्राचीनं चास्ति। प्राचीनकाले अत्र अनेके विद्वांसः अभवन्। इदं नगरं निकषा गंगा नदी प्रवहति। सहस्राधिकाः जनाः प्रतिदिनं अस्यां नद्यां स्नानं कुर्वन्ति।

अनुवाद– हमारे देश की समस्त नदियों में गङ्गा सबसे श्रेष्ठ प्रधान एवं पवित्र नदी है। यह नदी हिमालय से निकल कर बंगाल सागर में गिरती है। इसके तटपर अनेक नगर स्थित हैं। इन नगरों में पाटलिपुत्र प्रसिद्ध एवं प्राचीन है। प्राचीन काल में यहाँ अनेक विद्वान हुए। इस नगर के समीप गङ्गा नदी बहती है। हजारों लोग प्रतिदिन इस नदी में स्नान करते हैं।

१८. सीता– आर्यपुत्र! भवता सह अवस्थानेन नाहं गणयामि किमपि दुःखम्। एतानि दुःखानि न केवलं मामैव पीडयिष्यन्ति अपितु भवन्तमपि। भवान् आतपे तप्तः, वर्षासु आर्द्रदेहः, शिशिरे शीतार्त्तः, बुभुक्षया कृशदेहः, पिपासया शुष्ककण्ठः असहायः यदा वनेषु भ्रमिष्यति तदाऽहं राजप्रासादे सुखोषिता सती जीविष्यामि। किम् अयमेव रघुवधूनां धर्माचारः।

रामः–(आर्ये) धन्यासि वसुधात्मजे। एवं खलु धर्मानुगामिनी बुद्धिः विरला एव भवति, तर्हि वनवासाय सज्जा भव।

अनुवाद– सीता–आर्यपुत्र! आपके साथ रहने में मुझे कोई दुःख नहीं होगा। ये समस्त दुःख न केवल मुझे ही पीड़ा देंगे, बल्कि आपको भी। आप धूप में तपकर, वर्षा में भींग कर, जाड़ों में ठण्ढ से काँपते हुए, भूख से दुर्बल और प्यास से शुष्क कण्ठ हो, निराश्रय होकर जब वन में भ्रमण करते रहेंगे तब मैं राजमहल में सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करती रहूँगी। क्या यही रघुकुल की वधुओं का धर्माचरण है?

राम– आदरणीया, पृथ्वीपुत्री! तुम धन्य हो। इस प्रकार की धर्मानुगामिनी बुद्धि कम लोगों की होती है। वनवास के लिए तैयार हो जाओ।

१९. आसीत् पुरा मगधदेशे पाटलिपुत्रं नाम नगरम्। तत्र नन्दवंशोत्पन्नाः राजानः राज्यमकुर्वन्। तेषां कुशासनेन रुष्टो राजमन्त्री शकटारः नन्दानाम् उन्मूलनोपायं चिन्तयति स्म। एकदा सायङ्काले भ्रमतस्तस्य दृष्टिरेकस्मिन् ब्राह्मणे पतिता। स यत्र तत्र कुशान् पश्यति तत्र तत्र तान् उत्पाट्य तन्मूले तक्रं क्षिपति। शकटारेण पृष्टः सोऽभ्यधात् 'विवाहार्थं गच्छतो मम चरणौ कुशाङ्कुरैर्विक्षतौ जातौ। ततश्च लग्नवेला व्यतीता। सा च कन्या अन्येन वरेण परिणीता। अतोऽहं क्रुद्धः कुशानुत्पाटयामि।

अनुवाद – प्राचीनकाल में मगध देश में पाटलिपुत्र नामका नगर था। वहां नन्दवंश में उत्पन्न राजा राज्य करते थे। उनके कुशासन से कुद्ध राज्य का मन्त्री शकटार नन्दों के उन्मूलन का उपाय सोचने लगा। एक बार शाम को घूमते हुए उसकी दृष्टि एक ब्राह्मण पर पड़ी। वह जहाँ–जहाँ कुश देखता था वहाँ–वहाँ उन्हें उखाड़कर उनकी जड़ में मट्ठा डाल देता था। शकटार के पूछने पर उसने कहा–विवाह करने के लिए जाते समय मेरे पैर कुश की नोक से घायल हो गये। और तबतक लग्नवेला बीत गई और उस कन्या का विवाह दूसरे वर के साथ हो गया। अतः मैं क्रुद्ध होकर कुशों को उखाड़ रहा हूँ।

२०. पार्वतीं तपस्यानिरतां दृष्ट्वा शिवः ब्रह्मचारिणः रूपं गृहीत्वा तपोवनं समाययौ। पार्वती ब्रह्ममयेन तेजसा ज्वलन्तं तं जटिलं सपर्यया प्रत्युज्जगाम। ब्रह्मचारिवेषधारी शिवः पार्वत्याः कुशलं पप्रच्छ। 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्' इति तपसः निमित्तं जिज्ञासितवान् ब्रह्मचारी। तपसा पार्वत्या अधरौ उज्झितपाटलवर्णौ, नेत्रे च अनञ्जने आस्ताम्। ब्रह्मचारी पार्वतीं तपसः निवारयितुम् अचेष्टत। पार्वत्याः नवं वयः, ऐश्वर्ययुतं पितृगृहम्, अनुत्तमं सौन्दर्यञ्च ब्रह्मचारी अवर्णयत्। स तु पार्वतीं पृष्टवान् यत् अतः परं तपःफलं किं भवेत्।

अनुवाद – पार्वती को तपस्या में लीन देखकर शिव ब्रह्मचारी का रूप धारण कर तपोवन में पहुँचे। ब्रह्मतेज से देदीप्यमान जटाधारी की पार्वती ने पूजा अर्चना की। ब्रह्मचारी का वेश धारण करने वाले शङ्कर ने पार्वती का कुशलक्षेम पूछा। शरीर धर्मार्जन का प्रमुख साधन है' ऐसा कहकर ब्रह्मचारी ने तपस्या का कारण जानना चाहा। तप के कारण पार्वती के अधर रक्तवर्णविहीन और आँखें अञ्जनशून्य हो गई थीं। ब्रह्मचारी ने पार्वती को तप करने से हटाना चाहा। ब्रह्मचारी ने पार्वती की नवीन युवावस्था, ऐश्वर्ययुक्त पिता के घर, उसके अप्रतिम सौन्दर्य का वर्णन किया। उसने पार्वती से पूछा कि इन सबसे बढ़कर तप का फल क्या होगा।

२१. अस्ति कस्मिंश्चित् समुद्रोपकण्ठे महाञ्जम्बूपादपः सदाफलः। तत्र च रक्तमुखो नाम वानरः प्रतिवसति स्म। तत्र च तस्य तरोरधः कदाचित्करालमुखो नाम मकरः समुद्रसलिलात् निष्क्रम्य सुकोमलबालुकासनाथे तीरोपान्ते न्यविशत्। ततश्च रक्तमुखेन स प्रोक्त–भोः। भवान् समभ्यागतोऽतिथिः, तद् भक्षयतु मया दत्तानि अमृततुल्यानि जम्बूफलानि। एवमुक्त्वा तस्मै जम्बूफलानि ददौ। सोऽपि तानि भक्षयित्वा तेन सह चिरं गोष्ठीसुखमनुभूय स्वभवनमगात्।

अनुवाद–किसी समुद्र के तट पर सभी ऋतुओं में फल देने वाला एक विशाल जामुन

का पेड़ था। उस पेड़ पर रक्तमुख नामक बन्दर रहता था। तब एकबार संयोग से करालमुख नामक मगर समुद्र से निकल कर उस वृक्ष के नीचे तट की कोमल बालुकामय भूमि पर आ गया। तब रक्तमुख ने उससे कहा–महानुभाव! आप मेरे यहाँ आए हुए अतिथि हैं। अतः मेरे द्वारा गिराये गये अमृत के समान मधुर जामुन के इन फलों को खाइये। ऐसा कहकर उसे जामुन के फल दिये। वह (मगर) भी उन फलों को खाकर उसके साथ बहुत देर तक बातचीत का सुख उठाकर अपने घर को चला गया।

२२. धर्मात्मा युधिष्ठिरः बाल्यात् प्रभृति दुर्योधनेन कृतान् अपकारान् विस्मृत्य भीमसेनं गन्धर्वात् चित्ररथात् सपरिजनं दुर्योधनं त्रातुम् आदिशत्, अवदत् च–'दुर्योधनादयः वयम् च एकस्मिन् एव कुले उत्पन्नाः। अस्माभिः सह तेषां कलहः एकवंशीयानाम् कलहः। तैः कृतः अपमानश्च स्वकुलज एव भवति। किन्तु गन्धर्वैः क्रियमाणः अयं कुरुकुलजनानां निग्रहः अस्माकमपि कुलगौरवं हरति। एतेन भीमसेनः सत्वरं गत्वा चित्ररथं पराजित्य सपरिजनं दुर्योध नम् अरक्षत्।

अनुवाद– बचपन से ही दुर्योधन द्वारा किए गए अपकारों को भूलकर धर्मात्मा युधिष्ठिर ने भीमसेन को चित्ररथ नामक गन्धर्व से परिजन–सहित दुर्योधन की रक्षा करने के लिए आदेश दिया और कहा– 'दुर्योधन आदि तथा स्वयं हमलोग एक कुल में उत्पन्न हुए हैं। हमलोगों के साथ उनका झगड़ा एकवंश के भीतर का झगड़ा है। उनलोगों के द्वारा किया गया अपमान अपने कुल के भीतर ही है। किन्तु गन्धर्वों द्वारा किया गया (अपमान) कुरुकुल का ही नहीं हमलोगों के भी कुलके गौरव को नष्ट करता है।' इस पर भीमसेन ने शीघ्र जाकर चित्ररथ को हराकर परिवार सहित दुर्योधन की रक्षा की।

२३. तदा भारतवर्षं आंग्लदेशीयानां शासनाधीनमासीत्। ते हि शासकाः बहुभिः प्रकारैः भारतवासिनः पीडयन्ति स्म। तिलकः महोदयः भारतवासिनाम् एतद् दुःखम् हृदि अन्वभवत्। तद् दुःखम् नाशयितुम् देशमुक्तिव्रतम् च स अगृह्णात्। अभिलषितस्य सिद्धये दुस्सहानि दुःखानि च असहत अतएव लोकैः लोकमान्यः इति शब्देन स सश्रद्धं समर्चितः। अयमेव खलु–'स्वराज्यम् अस्माकं जन्मसिद्धोऽधिकारः' इति मन्त्रम् उदघोषयत्।

अनुवाद–उस समय भारतवर्ष अंग्रेजों के शासन के आधीन था। वे शासक बहुत प्रकार से भारतवासियों को कष्ट देते थे। तिलक महोदय ने भारतवासियों के इस दुःख को हृदय से अनुभव किया। उस दुःख का नाश करने के लिए देश की मुक्ति का व्रत उन्होंने लिया। अभिलाषा की सिद्धि के लिए दुस्सह दुःखों को भी सहा। इसीलिए लोगों द्वारा उन्हें श्रद्धापूर्वक 'लोकमान्य' के नाम से सम्पूजित किया गया। ये वही हैं जिन्होंने 'स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' मन्त्र की उद्घोषणा की।

२४. सूर्यकुले दिलीपो नामैकः प्रख्यातः नृपतिरासीत्। सदा सः प्रजापालनपरायणः अभवत्। परं पुत्रं विना खिन्नमनाः आसीत्। एकदा आत्मनः धर्मपत्न्या सह असौ गुरोर्वशिष्ठस्य आश्रमम् अगच्छत्। वशिष्ठोऽवदत्–'भो पुत्र! नन्दिनीनाम्नीम् अस्माकं गां सेवस्व।' गुरोराज्ञया स नन्दिन्याः सेवामारभत एकदा सा राज्ञा सह गौरीगुरोःगुहामाविवेश। तत्र तां हन्तुं सिंहं तत्परं दृष्ट्वा स राजा बाणमुद्धर्तुम् ऐच्छत्। नृपं प्रति विहस्य मृगेन्द्रः आह– 'हे राजन्! अलं तव श्रमेण। सा धेनुरत्र मम भोजनार्थं समागता।'

अनुवाद – सूर्यकुल में दिलीप नामक एक प्रसिद्ध राजा था। वह सदा प्रजापालन में

तत्पर रहता था। किन्तु पुत्र के अभाव में दुःखी रहता था। एकबार वह अपनी पत्नी के साथ अपने गुरु के आश्रम में गया। वशिष्ठ बोले–'हे पुत्र। हमारी नन्दिनी नाम की गाय की सेवा करो। गुरु की आज्ञा से वे नन्दिनी की सेवा करने लगे। एकबार वह गाय राजा के साथ हिमालय पर्वत की गुफा में प्रवेश कर गयी, वहाँ उस गाय को मारने के लिए तत्पर सिंह को देखकर राजा ने बाण चलाना चाहा। सिंह हंसकर राजा से बोला– हे राजन् तुम्हारी मेहनत बेकार हो जाएगी। यह गाय मेरे भोजन के लिए आ गयी है।

२५. सरस्वती प्रत्यवादीत्–'प्रियसखि! त्वया सह विचरन्त्याः न मे काञ्चिदपि पीडाम् उत्पादयिष्यति ब्रह्मलोकविरहः। त्वमेव वेत्सि भुवि समाधियोग्यानि स्थानानि'इत्यभिधाय विरराम। अन्येद्युः उदिते भगवति विरोचने, सरस्वती परित्यज्य वियोगविक्लवं स्वपरिजनं, त्रिः प्रदक्षिणीकृत्य चतुर्मुखं, सावित्रीद्वितीया ब्रह्मलोकतः निर्जगाम। निर्गत्य च क्रमेण मन्दाकिनीमनुसरन्ती मर्त्यलोकमवततार। अपश्यच्च अम्बरतलस्थितैव हिरण्यवाहनामानं महानदं यं जनाः 'शोण' इति कथयन्ति। दृष्ट्वा च तं रामणीयकहृतहृदया तस्यैव तीरे वासमरचयत्। उवाच च सावित्रीम्-सखि! रमयन्ति मां महानदस्यास्य उपकण्ठभूमयः, पक्षपाति च हृदयम् अत्रैव स्थातुं मे, इति।

अनुवाद – सरस्वती ने उत्तर दिया-हे प्रिय सखि । तुम्हारे साथ विचरण करती हुई मुझे ब्रह्मलोक के विरह से थोड़ा भी कष्ट नहीं होगा। पृथ्वी पर तपस्या करने के योग्य स्थानों को तुम्हीं जानती हो' ऐसा कहकर चुप हो गई। दूसरे दिन भगवान सूर्य के उगने पर वियोग से व्यथित अपने बन्धु-बान्धवों को छोड़कर, सरस्वती भगवान् ब्रह्मा की तीन बार प्रदक्षिणा करके सावित्री के साथ ब्रह्मलोक से चल पड़ी तथा बाहर आकर क्रमशः गङ्गा का अनुसरण करती हुई मर्त्यलोक में उतरी। आकाश में चलते हुए ही उसने हिरण्यवाह नाम के उस महानद को देखा जिसे लोग 'सोन' कहते हैं और उसे देखकर उसका हृदय उसकी रमणीयता के वशीभूत हो गया। अतः उसी तट पर (उसने) आवास बनाया और सावित्री से बोली–'सखि, इस विशाल नद की समीपवर्ती भूमि मुझे आनन्दित कर रही है। अतः मेरा मन यहीं रहना चाहता है।

२६. एकदा राजा दिलीपोऽश्वमेधयज्ञं कर्तुमश्वमेकं मुमोच। तस्य रक्षितृत्वेन नियुक्तो रघुस्तमनुययौ। 'दिलीपः शतं यज्ञान् विधाय पदवीं मे ग्रहीष्यति' इति भयेन प्रच्छन्नरूपो देवेन्द्रस्तं वाजिनमपजहार। नन्दिनीप्रसादात् विदितवृत्तो रघुः प्रथमं देवेन्द्रमश्वं ययाचे। अनुपलब्ध े अश्वे तेन सह योद्धुं प्रववृत्ते। तयोःमिथं युद्धे संप्रवृत्ते रघुरेव पूर्वं देवेन्द्रं वाणेन हृदि बिभेद। तत्प्रहारेण संक्रुद्धो देवेन्द्रोऽपि रघुं बाणेन प्रत्यविध्यत्। सायकः खलु यः सततमसुराणां रक्तपानेन अज्ञातनररुधिरास्वादः कुतूहलेनेव तच्छोणितं पपौ। कुमारो रघुरपि स्वनामाङ्कितं सायकं देवेन्द्रस्य भुजे निचखान, इषुणा च तस्य पताकां चिच्छेद।

अनुवाद - एक बार राजा दिलीप ने अश्वमेध यज्ञ करने के लिए एक घोड़ा छोड़ा। उसकी रक्षा के लिए रघु को नियुक्त किया। उस (रघु) ने घोड़े का अनुसरण किया। 'सौ यज्ञ करके दिलीप मेरा पद ले लेगा' इस भय से छिपकर इन्द्र ने उस घोड़े को चुरा लिया। नन्दिनी की कृपा से रघु को यह बात ज्ञात हुई और रघु ने साम-नीति का अनुसरण करते हुए देवेन्द्र से वह घोड़ा मांगा। घोड़ा न मिलने पर रघु ने इन्द्र के साथ युद्ध करने का निर्णय किया।

उनके मध्य युद्ध के शुरू हो जाने पर रघु ने ही पहले इन्द्र के वक्षस्थल में बाण मारा । प्रहार से क्रुद्ध हो कर इन्द्र ने भी रघु को बाण मारा। दानवों के ही रक्त को निरन्तर पीते रहने के कारण (बाण) मनुष्य के रक्त का स्वाद नहीं जान पाया था। अतः (वह) रघु का रक्त मानों कौतूहल से पीने लगा। कुमार रघु ने भी अपने नामसे चिह्नित बाण को देवेन्द्र की भुजा पर चलाया ओर बाण से ध्वजा काट डाली।

८.४. सारांश

संस्कृत से हिन्दी में अनुवाद करना सरल नहीं होता। इसके लिए जिन बिन्दुओं को ध्यान में रखना है, उनका विवेचन आरम्भ में कर दिया गया है। भाषा की अपनी प्रकृति होती है, उसको ध्यान में रखते हुए अनुवाद करना चाहिए।

संस्कृत वाक्यों में विशेषण विशेष्य के लिङ्ग और वचन के अनुसार होता है। अतः हिन्दी में अनुवाद करते समय शब्दशः अनुवाद करना उचित नहीं होगा। तिङन्त क्रियारूपों में भी संस्कृत में लिङ्ग भेद नहीं होता किन्तु हिन्दी में लिङ्ग भेद पाया जाता है। द्विवचन रूपों का अनुवाद करते समय उनके बहुवचन रूप ही हिन्दी में लिखे जाएँगे, क्योंकि हिन्दी में द्विवचन नहीं होता। संस्कृत में समस्त पदावली की अधिकता होती है हिन्दी में छोटे-छोटे वाक्यों में इनका अनुवाद करना चाहिए। 'मक्षिकास्थाने मक्षिका' न्याय का आलम्बन नहीं करना चाहिए।

इस पाठ में कुछ परिच्छेदों का अनुवाद हिन्दी में किया गया है तथा बहुतेरे संस्कृत के परिच्छेद अभ्यास के लिए दिए गए हैं।

८.५. अभ्यास के प्रश्न

1. अयम् अस्माकं विद्यालयः अस्ति। अस्य भवनं श्वेतवर्णम् अस्ति। अस्य प्रधानाध्यापकः बहुज्ञः अस्ति। अत्र विंशतिः अध्यापकाः सन्ति। एते सर्वे सुयोग्याः छात्रप्रियाः च सन्ति। छात्राः अनुशासिताः सन्ति। अस्मिन् विद्यालये प्रत्यब्दं समारोहाः भवन्ति। देशस्य विशिष्टाः विद्वांसः नेतारः च अत्र आगच्छन्ति।
2. यत्र विविधानि पुस्तकानि पठनार्थं संगृहीतानि भवन्ति तत् स्थानम् पुस्तकालयः उच्यते। तत्र हि त्रिविधः पुस्तकालयः व्यक्तिगतः, विद्यालयीयः, सार्वजानिकश्च। व्यक्तिगतः पुस्तकालयः अध्यापकानां अन्येषां बुद्धिजीविनाम् च भवति। विद्यालयीयः विद्यालयस्य अङ्गं भवति। छात्राणाम् अध्यापकानाम् च ज्ञानवर्धनाय विद्यालयीयः पुस्तकालयः भवति। अत्र शैक्षणिकानि पुस्तकानि संगृहीतानि भवन्ति। निर्धनच्छात्राणां कृते विद्यालयीयः पुस्तकालयः अत्युपयोगी भवति। सार्वजनिकेषु पुस्तकालयेषु बहुविधानि पुस्तकानि भवन्ति। पुस्तकालयसंपर्कात् शनैः शनैः विद्यारुचिः जागर्ति।
3. अस्माकं देशः भारतवर्षम्। अस्योत्तरस्यां दिशि नगाधिराजः हिमालयः अस्य मुकुटमणिरिव विराजते। भारतमहासागरः दक्षिणस्यां दिशि अस्य पादौ प्रक्षालयति। सभ्यतायाः संस्कृतेश्च क्षेत्रे अयं देशः अतीव पुरातनः लोकविश्रुतश्च वर्तते। सम्प्रति जीवनस्य सर्वेषु क्षेत्रेषु निरन्तरं वर्धमानस्य अस्य देशस्य शान्तिप्रेम विख्यातं वर्त्तते।

4. वसन्तः रमणीयः ऋतुः अस्ति। इदानीं शीतकालस्य भीषणशीतलता न भवति। मन्दं मन्दं वायुः वहति। विहंगाः कूजन्ति। विविधैः कसुमैः वृक्षाः आच्छादिताः भवन्ति। कुसुमेषु भ्रमराः गुञ्जन्ति। धान्येन धरणी परिपूर्णा भवति। कृषकाः प्रसन्नाः दृश्यन्ते। कोकिलाः मधुरं गायन्ति। आम्रेषु मञ्जर्यः दृश्यन्ते। मञ्जरीभ्यः मधु स्रवति।

5. अशोकस्तु बौद्धधर्मावलम्बी भूत्वाऽपि सर्वेषामपि धर्माणां समादरं कृतवान् । केनापि ध र्मेण सह तस्य विरोधो नासीत्। अहिंसाधर्मस्य प्रचारार्थं तेन बहवः कर्मचारिणो नियुक्ताः। ते खलु तत्तत्स्थानेषु अहिंसा धर्मस्य प्रचारं कृतवन्तः। अशोकस्य राजत्वे नासीत् कस्यापि जीवस्य हिंसा। हिंसात्मकयज्ञानामपि तेन निषेधः कृतः। तस्य राज्ये सुरापानस्य क्वापि चर्चा अपि नासीत्। हिंसायुद्धसुरापानादियुक्तानां नाटकानां प्रदर्शनमपि तेन निवारितम्।

6. संस्कृत-साहित्याकाशे कविकुलगुरुकालिदासः देदीप्यमान नक्षत्रवत् अस्ति। तस्य स्थितिकाल- विषये विदुषां मध्ये मतवैभिन्न्यम् अस्ति। केचित् विद्वांसः अस्य जन्मस्थानं मिथिलायां मन्यन्ते। केचित् उज्जयिन्यां मन्यन्ते। अद्यावधि अन्वेषकाः अस्य स्थितिकालविषये, जन्मस्थान-विषये च अन्वेषणं कुर्वन्ति। मेघदूतस्य श्लोकेन सूच्यते यत् कालिदासः मिथिलादेशोद्भवः नासीत्, वरन् सः उज्जयिन्यां उत्पन्नः आसीत्।। अस्य काव्ये यद्यपि विविधानां अलंकाराणां प्रयोगः दृश्यते परञ्च उपमालङ्कारे अस्य वैशिष्ट्यमस्ति। उपमा कालिदासस्य इति अस्य महाकवेः विषये विश्वविश्रुता उक्तिः।

7. अस्ति राजगृहं नाम एकं दर्शनीयं स्थानम्। कस्मिंश्चित् काले इदं मगधसाम्राज्यस्य राजधानी आसीत्। अत्र अनेके उष्णनिर्झराः सन्ति। एषु एकः सप्तधारा इति विदितोऽस्ति। अत्रैव गृध्रकूटस्य शिखरे भगवान् बुद्धः तपः कृतवान्। अत्र एकः विश्वशान्तिस्तूपः शोभते। तत्र गन्तुमेकः विद्युच्चालितः रज्जुमार्गः विद्यते। शीततर्तौ दूरात् लोकाः अत्र आगच्छन्ति। मलमासे इह मेला भवति। मलमासः वर्षत्रये सकृद् भवति।

8. एकस्मिन् ग्रामे कश्चित् निर्धनः युवकः आसीत्। तस्य नाम धनपालः आसीत्। सः प्रतिदिनं भिक्षायै ग्रामं ग्रामं भ्रमति स्म। भिक्षायां प्राप्तैः सक्तुभिः तस्य घटः पूर्णः अभवत्। सः घटं नागदन्ते अवलम्ब्य तस्य नीचैः खट्वायां शयनं करोति स्म, शयनकाले च निरन्तरम् एकदृष्ट्या घटं पश्यति स्म।

9. एष समुद्रतटः अस्ति। प्रणवः अत्र मित्रैः सह क्रीडति। सः बालुकाभिः गृहं रचयति। बालकाः कन्दुकेन क्रीडन्ति। ते पादैः कन्दुकं क्षिपन्ति। केचन तरङ्गैः सह क्रीडन्ति। अपरे तरङ्गैः साकं समुच्छलन्ति । अत्र अनेकाः नौकाः अपि सन्ति। धीवरैः सह पर्यटकाः नौकाभिः समुद्रविहारं कुर्वन्ति। केचन जनाः प्रातः समुद्रं गच्छन्ति तत्र साधवः मुनयः च स्नान्ति। भक्ताः देवालयं गच्छन्ति। तत्र ते देवेभ्यः देवीभ्यः च पुष्पाणि अर्पयन्ति प्रार्थयन्ते च।

10. विद्यालयस्य पुरतः एकम् उद्यानम् अस्ति। उद्यानस्य शोभा अतीव रमणीया। अत्र पुष्पाणां बहवः प्रकाराः सन्ति। तेषाम् उपरि भ्रमराः गुञ्जन्ति। ते पुष्पाणां रसं पिबन्ति। तत्र खगानां कलकूजनम् अतिसुखदं भवति। विद्यालयस्य क्रीडाक्षेत्रम् अतिविशालम् अस्ति। अत्र छात्राः न केवलं क्रीडासमये अपि तु अन्यस्मिन् समये अपि क्रीडन्ति।

क्रीडाशिक्षकात् ते क्रीडानिपुणताम् अधिगच्छन्ति। अस्माकं विद्यालये अध्ययनेन क्रीडनेन च छात्राणां शारीरिकः मानसिकः च विकासः भवति।

11. आसीत् कश्चित् चञ्चलो नाम व्याधः। पक्षिमृगादीनां ग्रहणेन सः स्वीयां जीविकां निर्वाहयति स्म। एकदा सः वने जालं विस्तीर्य गृहम् आगतवान्। अन्यस्मिन् दिवसे प्रातःकाले यदा चञ्चलः वनं गतवान् तदा सः दृष्टवान् यत् तेन विस्तारिते जाले दौर्भाग्याद् एकः व्याघ्रः बद्ध आसीत्। सोऽचिन्तयत् 'व्याघ्रः मां खादिष्यति अतएव पलायनं करणीयम्।'

12. अस्मिन् ऋतौ सर्वतः वृक्षेषु नूतनाः पल्लवाः रम्याणि च पुष्पाणि उद्भवन्ति। सकला धरा अभिनवैः परिधानैः इव सज्जिता भवति। आम्रवृक्षोऽपि नूतनै पल्लवैः नूतनाभिः च मञ्जरीभिः युक्तो भवति। अस्य शाखासु स्थित्वा कोकिलः पञ्चमेन स्वरेण मधुरं गायति। अस्य मधुर; स्वरः जनानां चित्तं हरति। युवतयः केशेषु पुष्पाणि धारयन्ति। ताः प्रसन्नाः भूत्वा इतस्ततः भ्रमन्ति। मधुकराः अपि पुष्पेषु स्थित्वा पुष्पाणां रसं पिबन्ति गुञ्जन्ति च।

13. आचार्यकौटिल्यस्य साहित्यं भारतीयसमाजे शान्तिन्याययोः रक्षणार्थं सुप्रतिष्ठितः शिक्षायाः ज्ञानभाण्डारोऽस्ति। राजनीतिकशिक्षायाः दायित्वं वरीवर्ति तस्य साहित्यं यतः मानवसमाजस्य कृते राज्यसंस्थापनस्य, राज्य-संचालनस्य राष्ट्र-संरक्षणस्य च शिक्षां ददाति। अन्ते कौटिल्यः कथयति यत् राज्यव्यवस्थायां राष्ट्रचरित्रनिर्माण-सम्बन्धे यावत्यः सुध ारयोजना ताः सर्वाः संक्षेपेण सन्निबद्धाः तस्य ग्रन्थे।

14. सूर्यः प्रातःकाले पूर्वस्यां दिशायाम् उदेति। प्रातःकाले सूर्यस्य प्रकाशः अन्धकारम् अपनयति। तदा प्रकृतेः शोभा अतीव रमणीया भवति। शीतलः सुगन्धः च समीरः वहति। खगाः वृक्षेषु मधुरं कूजन्ति। उपवनेषु पुष्पाणि सरोवरेषु च कमलानि विकसन्ति। विकसितानां पुष्पाणामुपरि स्थित्वा भ्रमराः मधुरं गुञ्जन्ति। आश्रमेषु मुनयः स्नानं कृत्वा सूर्यं नमन्ति ईश्वरं च भजन्ति। ग्रामेषु कृषकाः प्रातराशं कृत्वा हलसहितान् बलीवर्दान् नीत्वा क्षेत्राणि गच्छन्ति। जनाः उपवनेषु भ्रमणं कुर्वन्ति। छात्राः विद्यालयं गच्छन्ति। अस्माकं जीवने सूर्यस्य अत्यधिकं महत्त्वमस्ति। अस्यैव प्रकाशे सर्वेः व्यवहाराः प्रचलन्ति। गायत्रीमन्त्रः अस्यैव स्तुतिं करोति।

15. भारतमागत्य सः (महात्मा गांधी) अहिंसामवलम्ब्य स्वदेशस्य स्वतन्त्रतायै प्रयत्नशीलोऽभवत्। एतदर्थं सः असहयोगं आन्दोलनं प्रावर्तयत्। सः अनेकवारं सत्याग्रहमकरोत्। 'आंग्लीयाः! भारतं त्यजत' इति आन्दोलनमपि प्रारभत। आंग्लीयाः बहुवारं तं कारागारे अक्षिपन्। अस्य महापुरुषस्य प्रयत्नैः भारतं स्वतन्त्रमभवत्। तेन ध र्मविषये आचारविषये च बहु लिखितम् । परं सत्यस्य मम प्रयोगः, इति शीर्षकेन आत्मकथा, श्रीमद्भगवद्गीतायाश्च अनासक्तियोगनामकं भाष्यम् इति रचनाद्वयं महत्त्वपूर्णमस्ति। एष महापुरुषः 'राष्ट्रपिता' इत्यभिधानमपि प्राप्तवान्।

16. दीपावली भारतवर्षस्य एकः महान् उत्सवः अस्ति। अयम् उत्सवः कार्तिकमासस्य अमावस्यायां भवति। इदं कथ्यते यत् अस्मिन् दिवसे रावणं हत्वा रामः सीतया लक्ष्मणेन च सह अयोध्यां प्रत्यागच्छत्। तदा अयोध्यायाः जनाः अतीव प्रसन्नाः

अभवन्। अतः ते स्वानि गृहाणि दीपानां मालाभिः सज्जीकृतवन्त। ततः प्रभृति प्रतिवर्षं तस्मिन् एव दिवसे एष उत्सवः भवति। सर्वे जनाः स्वगृहाणि स्वच्छानि कुर्वन्ति सुध या लिम्पन्ति सुन्दरैश्च चित्रैः भूषयन्ति। रात्रौ जनाः लक्ष्मीं पूजयन्ति मिष्टान्नानि च भक्षयन्ति। भारतीयाः इमम् उत्सवं प्रतिवर्षं सोल्लासं समायोजयन्ति।

17. वैदिककालेऽपि गद्यस्य प्रचुरः प्रयोग आसीत्। गद्यसाहित्यस्य सर्वप्रथमदर्शनं वैदिकसंहितासु भवति। प्राचीनतमं गद्योदाहरणं कृष्णयजुर्वेदस्य तैत्तिरीयसंहितायाम् उपलभ्यते। समस्तब्राह्मणग्रन्थेषु, आरण्यकेषु, उपनिषत्सु च गद्यप्रयोगो व्यापकरूपेण दृश्यते। रुद्रदाम्नः शिलालेखे या गद्यशैली दृश्यते सा समासबहुला ओजोगुणगुम्फिता च वर्त्तते। अयमेव ओजोगुणो गद्यस्य प्राणात्मको मन्यते।

18. संस्कृतसाहित्येऽर्थशास्त्रस्य विशदः प्रभावो लक्ष्यते। भारतीयानां राजनीतेरितिहासः ख्रीष्टात् प्राक् सप्तमशताब्द्याः विद्यते। अतः अर्थशास्त्राणां प्रणयनकालः Öीष्टात् पंचमशताब्द्यां विद्यते स्म। अस्मिन्नेव काले विद्यमानेषु जातकग्रन्थेषु अर्थशास्त्रं पृथक्शास्त्ररूपेण प्रतिष्ठितमासीत् किन्तु कौटिल्यात् पूर्ववर्तिनां अर्थशास्त्रिणां ग्रन्थाः नोपलभ्यन्ते।

19. गद्यकारो बाणभट्टः बिहारस्य शोणनदोपकूलस्य प्रीतिकूटग्रामस्य निवासी आसीत्। अस्य पिता वात्स्यायनकुलावंतसः चित्रभानुरासीत्, माता राजदेवी चासीत्। महाकविरयं सम्राजो हर्षवर्घनस्य प्रधानसभापण्डितपदम् अलञ्चकार। ऐतिहासिक-प्रमाणैः हर्षवर्धनस्य निश्चित:समयो वर्त्तते खीष्ट-सप्तमशताब्द्याः पूर्वा एव। राज्ञो हर्षस्य राज्ये असौ कविर्बाणभट्टः 'हर्षचरितम्, कादम्बरी, चण्डीशतकम् मुकुटताडितम्' इत्यादीनि बहूनि काव्यानि व्यरचयत्।

20. महर्षेः आरुणेः पुत्रः श्वेतकेतुः आसीत्। द्वादशवर्षीयं तं पुत्रं पिता आरुणिः उवाच-'हे श्वेतकेतो! गुरुं प्रति गच्छ अध्ययनार्थं यतः सौम्य! अस्मत्कुलीनः अनधीत्य न भवति इति। सः पुत्रः आचार्यम् उपेत्य यावत् चतुर्विंशतिवर्षः अभवत् तावत् सः सर्वान् वेदान् सार्थान् अधीत्य पितुः सकाशम् आगच्छत्। सः च 'सर्वश्रेष्ठः अहम्' इति मन्यमानः उद्धतस्वभावः अभवत्।

21. धारानरेशस्य भोजराजस्य चरितं भोजप्रबन्धनाम्नि ग्रन्थे उपलभ्यते। महाराजः भोजः परमविद्वान्, गुणवान्, दानशीलः, कलाप्रियश्च आसीत्। तस्य राजसभायां समागताः कवयः काव्यपाठं कृत्वा विपुलं पुरस्कारराशिं लभन्ते स्म। भोजप्रबन्धः गद्यपद्यमयी ललिता रचनाऽस्ति। अस्य भाषा सुबोधा व्यवहारोपयोगिनी च। षोडशशताब्द्यां जातः श्रीवल्लालसेनः अस्य ग्रन्थरत्नस्य प्रणेता।

22. एकदा षड्वर्षीयः श्रीकृष्णः वृन्दावने यमुनातटम् अगच्छत्। गोपाः अपि तत्र तेन सह अगच्छन्। गोपाः पिपासया आकुलाः अभवन्। ते यमुनाजलम् पीत्वा मूर्च्छिताः अभवन्। श्रीकृष्णः तान् मूर्च्छितान् दृष्ट्वा व्याकुलः अभवत्। वस्तुतः यमुनाजले कालियनागस्य कुण्डम् आसीत्। तेन यमुनाजलं विषज्वालाभिः विषाक्तं जातम्। अनेके खगाः पशवः च तत् जलं पीत्वा मृत्युं प्राप्ताः। वायुः अपि तेन विषयुक्तः अभवत्। तेन

वायुना वृक्षाः शुष्काः जाताः।

23. अयोध्यायां पुरा 'दशरथो' नाम राजा बभूव। तस्य 'कौसल्या' 'कैकेयी' 'सुमित्रा' इति तिस्रो धर्मपत्न्यः आसन्। पुत्रार्थे तत्पुरोहितस्य वसिष्ठमहर्षेरनुमत्या जामाता ऋष्यशृङ्गः नाम महर्षिः पुत्रकामेष्टिम् अनुष्ठितवान्। ततः ज्येष्ठा कौसल्या राजपत्नी 'श्रीरामं', मध्यमा कैकेयी 'भरतं', कनिष्ठा सुमित्रा लक्ष्मणशत्रुघ्नौ यमलौ च सुषुविरे। अध ीतसाङ्गवेदेषु तेषु बालेषु, रामलक्ष्मणौ महर्षिर्विश्वामित्रो यज्ञरक्षायै स्वाश्रमं निनाय अस्त्रविद्यां चाध्यापयामास। गुरुः स्वारब्धस्य यज्ञस्य विघ्नकारिणोः राक्षसान् हतवतोः तयोः शिष्ययोरत्यन्तं परितुतोष।

24. कस्मिंश्चित् सरोवरे भारुण्डनामा पक्षी एकोदरः पृथग्ग्रीवः प्रतिवसति स्म। तेन च समुद्रतीरे परिभ्रमता किञ्चित्फलममृतकल्पं तरङ्गक्षिप्तं सम्प्राप्तम्। सोऽपि भक्षयन्निदमाह–'अहो बहूनि मयाऽमृतप्रायाणि समुद्रकल्लोलाहृतानि फलानि भक्षितानि। परमपूर्वोऽस्यास्वादः। तत्किं पारिजातहरिचन्दनतरुसंभवम्। किं वा किञ्चिदमृतमयफलमिदं विधिनाऽपातितम्।

25. इह खलु पञ्चेन्द्रियाणि, पञ्चेन्द्रियद्रव्याणि, पञ्चेन्द्रियार्थाः च भवन्ति। तत्र चक्षुः, श्रोत्रं, घ्राणं जिह्वा, त्वक् च इति पञ्चेन्द्रियाणि। पञ्चेन्द्रियद्रव्याणि खं वायुः ज्योतिः आपो भूः इति। पञ्चेन्द्रियार्थाः शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः। मनःपुरसराणि च इन्द्रियाणि अर्थसंग्रहसमर्थानि भवन्ति। न इन्द्रियवशगः स्यात्। न चञ्चलं मनः अनुभ्रामयेत्। गुरु-वृद्ध-आचार्यान् अर्चयेत्। अतिथीनां पूजकः स्यात्। काले हितमित-मधुरार्थवाची स्यात्। वश्यात्मा, महोत्साहः, विनयबुद्धिः निर्भीकः, क्षमावान् सर्वप्राणिषु बन्धुभूतः स्यात्।

26. एकदा शीतस्य भीषणः प्रकोपः अभवत्। सम्राट् चन्द्रगुप्तः निश्चितवान् यत् निर्धनेभ्यः कम्बलानां वितरणं भवेत्। प्रधानमन्त्री चाणक्यः तत्कार्यं स्वीकृतवान्। भृत्याः सर्वान् कम्बलान् तस्य कुटीरे स्थापितवन्तः । रात्रौ केचन चौराः कम्बलान् चोरयितुं तस्य कुटीरं प्राविशन्। ते अपश्यन् यत् चाणक्यः एकस्मिन् कटे कम्बलं विना एव सुप्तः। तस्मिन् एव क्षणे चाणक्यः पदध्वनिं श्रुत्वा प्रबुद्धः। चौराः तम् अपृच्छन् भवतां समीपे कम्बलानां राशिः अस्ति तथापि भवान् कम्बलं विना एव स्वपिति। चाणक्यः अवदत्–' शृणुत। एते प्रावारकाः केवलं निर्धनेभ्यः वितरणार्थम् एव सन्ति। यदि अहं एतेषु एकं स्वीकरोमि तर्हि अहं चौरः भविष्यामि।'

27. कालिदासस्य लोकप्रियतायाः कारणं तस्य प्रसादगुणयुता ललिता परिष्कृता शैली अस्ति। शब्दलाघवः कालिदासस्य कलात्मकरुचेः परिचायकः अस्ति। तस्य अलंकारेषु उपमायाः प्रयोगः अद्वितीयः अस्ति। चरित्रचित्रणे कालिदासः अतीव पटुः अस्ति। भाषा भावश्च पात्रानुकूलौ दृश्येते। कालिदासस्य प्रकृतिचित्रणं अतीव रम्यम् अस्ति। कालिदासमतेन तपसा प्रेम निर्मलं पुष्टं च भवति। कालिदासः उपमाप्रयोगे प्रसिद्धः अस्ति।

28. प्राचीने भारते मुनयो वनेषु निवसन्ति स्म। यादवानां नेता कृष्णः दीनः सुदामा च एकस्मिन्नेवाश्रमे अपठताम्। द्वयोः पुनः मैत्री अपि तत्रैव। ते बालकान् पाठयन्ति स्म।

छात्रा आश्रमेषु आगत्य पठन्ति स्म। गुरूणां सेवा, नियमेन पठनं च तत्र भवति स्म। नृपस्य पुत्रो वा भिक्षुकस्य सुतो वा आश्रमे तु समानरूपेण निवसन्ति स्म। आश्रमेषु सर्वेषां शास्त्राणामध्यापनं सम्यक् रूपेण भवति स्म।

29. एकं कुटीरम् । तत्र कश्चन वृद्धः लेखकः बहुकालात् एकं ग्रन्थं लिखति स्म। अद्य लेखनकार्यं समाप्तम्। सः आनन्देन लेखनीम् अधः स्थापितवान्। तत्र एका वृद्धा आगता। 'भवती का'? 'अहं भवतः पत्नी।' 'मम पत्नी? कदा मम विवाहः अभवत्? सा वृद्धा सर्वं प्राचीनं वृत्तान्तं कथितवती–'ग्रन्थस्य लेखने निमग्नः भवान् किमपि न स्मरति स्म। अहं भवतः सेवां कृतवती।' 'भवत्याः नाम किम्?' 'मम नाम भामती।' भवत्याः त्यागः महान् अस्ति। अतः एतस्य ग्रन्थस्य नाम 'भामती' इति करिष्यामि। एतस्य ग्रन्थकारस्य नाम वाचस्पतिमिश्रः। 'भामती' इति तस्य प्रसिद्धः दर्शनग्रन्थः अस्ति।

30. कालिदासः मेघदूतं रचितवान्। मेघदूते मानसूनविज्ञानस्य अद्भुतं वर्णनम् अस्ति। मानसूनसमयः आषाढमासात् प्रारभते। श्याममेघान् दृष्ट्वा सर्वे जनाः प्रसन्नाः भवन्ति। मानसूनमेघाः सर्वेषां जीवानां कष्टम् अपहरन्ति। मेघानां जलं वनस्पतिभ्यः, पशुपक्षिभ्यः किं वा सर्वेभ्यः प्राणिभ्यः जीवनं प्रयच्छति। मेघजलैः भूमेः उर्वराशक्तिः वर्धते।

31. प्रतिवर्षम् माघशुक्ल-पक्षस्य पञ्चम्यां तिथौ जनाः सरस्वतीपूजनोत्सवम् मन्यन्ते। अस्मिन् दिने पाठशालायाम्, विद्यालये, महाविद्यालये, ग्रामे ग्रामे च जनाः सरस्वत्याः प्रतिमां स्थापयन्ति। तस्याः प्रतिमायाः प्राणप्रतिष्ठां च कुर्वन्ति। षोडशोपचारैः पूजयन्ति च। जनाः सरस्वत्याः स्तवनम्, माल्यार्पणञ्च कुर्वन्ति। रात्रौ यत्र तत्र कीर्तनं भवति। विद्यालयेषु महाविद्यालयेषु नाट्याभिनयञ्च छात्राः कुर्वन्ति। दर्शकाः आनन्दमनुभवन्ति। अपरस्मिन् दिने नृत्यगीतादिकं कुर्वन्तः जनाः प्रतिमा-विसर्जनं कुर्वन्ति।

32. अनुशासनम् शासनमनु अर्थात् शासनेन निर्मितान् नियमान् पालयन्तः लोकाः अनुशासिताः कथ्यन्ते। अनुशासनाभावे समाजे उच्छृंखलता आगच्छति। सर्वे स्वैराचारं कुर्वन्तः न कथमपि आत्मोन्नतिम्, देशोन्नतिञ्च कर्तुम् समर्थाः। पारिवारिकी व्यवस्था अपि अनुशासनाश्रिता अनुशासनाभावे विद्यार्थिनः उद्दण्डाः भविष्यन्ति, वणिजः अधिकं लाभमेष्यन्ति अतएवानुशासनम् देशस्य, समाजस्य, मनुष्याणां छात्राणाञ्च कृते परमावश्यकमस्ति। अस्माकं व्यवहारेषु अपि अनुशासनम् दृश्यते। छात्राणाञ्च कृते विद्यालय एव अनुशासनशिक्षण-केन्द्रमस्ति। अस्मिन्नेव काले छात्राणाम् मनःसु यः प्रभावः जायते सः स्थायी भवति। बाल्ये अनुशासनहीनाः बालकाः प्राप्ते वयसि अनुशासिता भविष्यन्तीति दुराशामात्रम्।

33. एकः स्थूलकायः कुक्कुरः रोटिकाखण्डं मुखे धृत्वा कुत्रचिद् गच्छति स्म। मार्गे नद्यां काष्ठस्य सेतुरासीत्। कुक्कुरः सेतुमध्ये आगत्य जले स्वप्रतिबिम्बं दृष्टवान्। प्रतिबिम्बं दृष्ट्वा मनसि व्यचिन्तयत्-'अयं कश्चित् दुर्बलः कुक्कुरः अस्ति। अहं बलात् तस्य रोटिकां हरामि।' एवं विचार्य यदैव तस्य रोटिकां हर्तुं मुखं व्याददाति तस्य मुखात्

रोटिकाखण्डं जले पतितम्।

34. कथ्यते ऋषिभिः–'सा शिक्षा या विमुक्तये।' विमुक्तिः कस्मादिति प्रश्नः उदेति? अविवेकात् यावन्न विमुक्तिः तावन्न जनस्य कल्याणम्। शिक्षायाः उद्देश्यं सम्प्रति येन केनापि प्रकारेण धनार्जनम् सञ्जातम्। परं धर्मं विना धनं न शोभते। अतः चतुर्षु वर्गेषु धर्मस्य प्रथमं स्थानम् । धर्मश्च नाम कर्त्तव्यपालनम्। शिक्षा कर्त्तव्यमुपदिशति। यदि कोऽपि शिक्षायाः उपदेशं न शृणोति सः धर्मं कदापि नाचरिष्यति। धर्मं विना धनं समाजे दुर्व्यवस्थामुत्पादयति।

35. प्रजातन्त्रं संसारे राजपद्धतिषु अनुत्तमं कथ्यते। यद्यपि जगति शासनस्यानेकानि रूपाणि प्रचलितानि सन्ति। परन्तु राजतन्त्रम्, गणतन्त्रम्, अधिनायकतन्त्रम्, सैनिकतन्त्रम्, साम्यवादितन्त्रम् च सर्वाणि शासनस्वरूपाणि प्रजातन्त्रम् अतिशेते। अस्मिन्नेव शासनतन्त्रे प्रजाः शासनकार्येषु प्रत्यक्षमुत्तरदायित्वं वहन्ति। मतदानप्रणाल्या शासनव्यवस्थां स्वीकर्तुमस्वीकर्तुं च अधिकारः प्रजानां भवति। अस्माकं देशे इमामेव व्यवस्थां सर्वे राष्ट्रसेवकाः प्रचारितवन्तः । अधुना इयं शासनप्रणाली विवादास्पदा विद्यते।

36. कस्मिंश्चिन्नगरे चन्द्रो नाम भूपतिः प्रतिवसति स्म। तस्य पुत्राः क्रीडारता वानरयूथं नित्यमेव विविधैः भोजनभक्ष्यादिभिः पुष्टिं नयन्ति स्म। अथ वानरयूथाऽधिपो यः स औशनस- बार्हस्पत्य-चाणक्य-मतवित् तदनुष्ठाता च तत्सर्वानप्याध्यापयति स्म। अत्र तस्मिन् राजगृहे लघुकुमारवाहनयोग्यं मेषयूथमासीत्। तन्मध्यादेको जिह्वालौल्यादहर्निशं निःशङ्कं महानसे प्रविश्य यत्पश्यति, तत्सर्वं भक्षयति। ते च सूपकाराः यत्किञ्चित् काष्ठं, मृण्मयं भाजनं, कांस्यपात्रं, ताम्रपात्रं वा पश्यन्ति तेनाशु ताडयन्ति मेषम्।

37. अस्ति-समस्त-विश्वम्भराभोग-भास्वल्ललाम-लीलायमानः, समानः सेव्यतया नाकलोकस्य, ग्राम्यकवि-कलाबन्ध इव नीरसस्य मनोहरः,भीम इव भारतालङ्कार-भूतः, पशुपति-जटाबन्ध इव भगीरथ-भूपाल-कीर्ति-पताकया गङ्गया पुण्यसलिलैः प्लावितः, चन्द्रभागालंकृतैकदेश्यश्च, सारः सकल-संसार चक्रस्य, शरण्यः पुण्यकारिणाम्, आरामो रमणीय-कदलीवनस्य, धाम धर्मस्य, आस्पदं संपदाम्, आश्रयः श्रेयसाम्, आकरः साधुव्यवहाररत्नानाम्, आचार्यभवनम् मर्यादोपदेशानाम् आर्यावर्तो नाम देशः।

38. यौवनारम्भे च प्रायः शास्त्र-जल प्रक्षालन-निर्मलापि कालुष्यम् उपयाति बुद्धिः। अनुज्झित-धवलतापि सरागेव भवति यूनां दृष्टिः। इन्द्रिय-हरिण-हारिणी च सततम् अतिदुरन्तेयम् उपभोग-मृगतृष्णिका। नवयौवनकषायितात्मनश्च सलिलानीव तान्येव विषय-स्वरूपाणि आस्वाद्यमानानि मधुरतराणि आपतन्ति मनसः। नाशयति च दिङ्मोह इव उन्मार्ग-प्रवर्तकः पुरुषम् अत्यासङ्गो विषयेषु। भवादृशा एव भवन्ति भाजनानि उपदेशानाम्।

39. वत्स, नासि नप्रियो निर्गुणो वा परित्यागार्हो वा। स्तन्येनैव सह त्वया पीतं मे हृदयम्। अस्मिंश्च समये प्रभूत-प्रभु-प्रसादान्तरिता त्वां न पश्यति दृष्टिः। अपि च पुत्रक! पुरुषान्तर-विलोकन-व्यसनिनी नास्मि लक्ष्मीः, क्षमा वा। कुलकलत्रमस्मि चारित्रमात्रध ना धर्म-धवले कुले जाता। किं विस्मृतोऽसि मां समरशतशौण्डस्य पुरुषप्रकाण्डस्य केसरिण इव केसरिणां गृहिणीम्। वीरजा, वीरजाया, वीरजननी च मादृशी पराक्रमक्रीता

कथमन्यथा कुर्यात्।

40. ततः क्षणेन तिमिरपतिहतेष्विव तत इतः परिभ्रमत्सु कमलसरसि मधुकरनिकरेषु, रविविरह-विधुरासु विलपन्तीष्विव सरोजिनीषु, धृष्टद्युम्नवीर्यमिव कुण्ठितद्रोणप्रभावम्, नन्दनवनमिव संचरत्कौशिकम्, सजीवमिव तपोमणिभिः, संवर्धितमिव अग्निहोत्रधूमलेखाभिः, अपत्यमिव रजन्याः, सुहृदिव कलिकालस्य, मित्रमिव दुर्जनहृदयस्य तिमिरम् उदजृम्भत।

41. एकदा शनैः शनैः उदिते भगवति सवितरि, स्पष्टे जाते प्रत्युषसि, तस्मिन् वनस्पतौ, स्वनीडावस्थित एव ताते, मयि च तातस्य समीपवर्तिनि कोटरगते मृगया-कोलाहलध्वनिरुदचरत्। आकर्ण्य च तमहं भयविह्वलः समीपवर्तिनः पितुः जराशिथिलपक्षपुटान्तरम् अविशम्। अचिराच्च प्रशान्ते तस्मिन् मृगयाकलकले अभिमुखम् आपतत् शबरसैन्यम् अद्राक्षम्। मध्ये च तस्य शबरसैन्यस्य, प्रथमे वयसि वर्तमानम्, अपत्यमिव विन्ध्यस्य, अंशावतारमिव कृतान्तस्य, सहोदरमिव पापस्य, सारमिव कलिकालस्य, मातङ्गकनामानं शबरसेनापतिम् अपश्यम्।

42. अस्ति रम्यता-निरस्त-समस्त-सुरलोका, मध्यभागम् अलंकृत्य स्थिता भारतवर्षस्य, तुषार- धवल-भित्तिना विशालवप्रेण परिगता प्राकारेण, महताखातवलयेन वेष्टिता, पवन-चटु-चलित- धवल-ध्वजकलापैः गोपुरैरुपेता, सुधा-धवल-प्राकार-वलयितैः, अमर-मन्दिर-मण्डलैरुद्भासित- चत्वरा, पृथुलायतैर्विपणिपथैः प्रसाधिता, सौधैः संवलिता, इन्धनीकृत-सगर-तनय-स्वर्ग- वार्ताम् इव प्रष्टुं भागीरथीम् उपस्थितया सरय्वा सरिता कृत-पर्यन्तसख्या, सतत-गृह-व्यापार- निषण्णमानसाभिः, निसर्गतो गुरु-वचनानुरागिणीभिः, अङ्गीकृत-सती-व्रताभिः, अनुज्झित-विनयाभिः, अलङ्कृता वधूभिः, सर्वैरप्युदार-विशेषैः सर्वेरपि सन्मार्गवर्तिभिः सन्तुष्टैः सर्वदा संविभाग-परैः निवासिलोकैः संकुला, उत्तरकोसलेषु अयोध्येति यथार्थनामा नगरी।

43. किं नाम सत्यम्? काव्ये सत्यशब्देन न दार्शनिकं वैज्ञानिकं वा सत्यम् अपेक्ष्यते। वैज्ञानिकं सत्यं विश्लेषणप्रधानं सौन्दर्यानुभूति-विरहितं च। दार्शनिकं सत्यं तु केवलं बुद्धिं प्रभावयति। न तु तद् हृदयस्पर्शि मनःप्रसादजनयितृ भावोद्बोधनक्षमं च। काव्ये सत्यशब्देन स्वानुभूतिजन्यं कल्पनालङ्कृतं हृदयस्पर्शि च सत्यं गृह्यते। तदेतत् सत्यं हृदयम् आह्लादयति, बुद्धिं विकासयति, चेतः प्रसादयति, अनुभूतिं विशदयति, सद्भावान् विस्तारयति, प्रसुप्ताः चित्तवृत्तीरुद्बोध्य विकासाभिमुखं विधत्ते।

44. कदाचित् पण्डितश्रीः श्रीपाददामोदरसातवलेकरमहोदयः महर्षेः दयानन्दस्य 'सत्यार्थप्रकाशम्' 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिकां च हस्तगतमकरोत्। तौ च ग्रन्थावधीत्य जीवनस्य पद्धतिमेव पर्यवर्त्तयत्। तदा प्रभृत्येव स वेदेषु श्राम्यन् महतीं वेदविद्यां प्राप्नोत्। ततश्च स चित्रकारो महान् वेदवित् पण्डितः समपादि। सर्वप्रथममनेनैव विदुषा तयोर्द्वयोः ग्रन्थयोः महाराष्ट्र्याम् अनुवादः कृतः। तत एव च स आर्यसमाजेन राष्ट्रियमहासभया च सम्पर्कं प्रारभत। अयं राष्ट्रियमहासभायां श्रीमतो बालगङ्गाधरतिलकस्य सिद्धान्तमन्वसरत्।

45. कृषेः समृद्धिरधिकांशतो दैवाधीना भवति। देवतानामनुग्रहेण कृषिर्वर्धते इति लोकध

ारणा। सिन्धुसभ्यतायुगे-शस्यशालिनीदेव्याः पूजा क्रियते स्म। वैदिकयुगे मन्त्रप्रयोगैः यज्ञादिभिः कर्मकाण्डैश्च यथाकालं वृष्टिप्रवर्तनं कृषिरक्षणं फलबाहुल्यं च सुकरं विहितम्। आग्रहायणयज्ञे गृहपतिः नवान्नानि देवेभ्यः समर्प्य स्वयं भुक्तवान्। जलवर्षणाय 'कारोरी' इति ख्यातो यज्ञः सम्पादितः। धर्मशास्त्रेषु तडागनिर्माणस्य पुण्यात्मकः प्रभावो निदर्शितः। एभिस्तडागैः सेचनकर्म सरलमजायत। जलदानं सर्वोच्चमिति व्यवस्थापितम्।

46. विघटनभावना साम्प्रतं देशेऽस्मिन् नितरां स्फीतिम् उपेयुषी दृश्यते। हिंसापिशाची यत्र-तत्र स्वकीयं ताण्डवं प्रदर्शयन्ती शान्तिप्रवणानां जनानां मानसम् उद्वेजयति। साम्यवादोपरक्ता वैदेशिकी विचारधारा यत्र-तत्र भृशं लब्धप्रसरा विलोक्यते। प्राचीना सकलापि मूल्यधारणा अनुदिवसं विशीर्यमाणा दरीदृश्यते। अस्मिन् सिद्धान्तसङ्घर्षस्यकाले मालवीयमहोदयस्य जीवनम् अस्माकं कृते भृशं प्रेरणाप्रदं वर्तते।

47. अधुना विद्वन्नामधारिणो मूर्खेभ्योऽपि हीनतराः क्वचिद् दृश्यन्ते। सततं मोहमायाविपन्ना न ते सन्ति विमलमार्गचारिणः। येन केन प्रकारेण परधनहरणाय विकलमतयस्ते लोकसंग्रहाय न यतन्ते । बाह्याडम्बरसम्पन्ना आधुनिकविद्वांसः मरीचिकारूपपाश्चात्त्यसभ्यताम् अनुसरन्ति। इत्थं विद्या विनयं न दत्त्वाऽविनयस्यैव कारणं भवति। सत्यं विश्वविद्यालये आधुनिकशिक्षासमापन्ना जनाः स्वदेशस्य सभ्यताम् आदर्शं शीलं च निन्दन्ति।

48. शिव इत्यस्य किं स्वरूपम् ? 'शिवम्' प्राधान्येन धर्मशास्त्रादीनां सामाजिकशास्त्राणां च विषयः। परहितनिरतत्वं परार्थसाधनत्वं लोककल्याणजनकत्वं च, न केवलं व्यष्टेः अपि तु समष्टेरपि शिवशब्देनाभीष्यते। शिवत्वेन जगद्धितकराः, आचारादिपरिष्कारकाः, नैतिकभावसंपोषकाः च भावा गृह्यन्ते। काव्ये तथाविधभावानाम् उपादेयत्वमनिवार्यम्। शिवत्वम् आदर्शान्वयि यथार्थावगाहि नीतितत्त्वप्रवणं च । यतो हि यत्र यत्र शिवत्वं तत्र तत्र आदर्शान्वयित्वम्। कविः सौन्दर्यप्रवणत्वात् कुरूपेऽपि सुरूपत्वम्, अशिवेऽपि शिवत्वम्, अमङ्गलेऽपि मङ्गलत्वम्, नीरसेऽपि सरसत्वं सञ्चारयति।

49. यावदेष ब्रह्मचारी बटुः अलिपुञ्जमुद्धूय कुसुमकोरकान् अवचिनोति, तावत् सतीर्थ्यः अपरः तत्समानवयाः कस्तूरिकारेणुरूषित इव श्यामः चन्दनचर्चितभालः कर्पूर-अगरुक्षोदच्छुरित-वक्षो बाहुदण्डः, सुगन्धपटलैः उन्निद्रयन्निव निद्रामन्थराणि कोरकनिकरकदम्बक सुप्तानि मिलिन्दवृन्दानि झटिति समुपसृत्य निवारयन् गौरबटुम् एवम् अवादीत्-अलं भो अलम्। मयैव पूर्वम् अवचितानि कुसुमानि, त्वं तु चिरं रात्रावजागरीरिति क्षिप्रं नोत्थापितः।

50. संस्कृतसंसारे कात्यायननामानः बहवो विद्वांसः श्रूयन्ते। श्रौतसूत्रकारः कात्यायनो महर्षिस्तु प्राचीनतरः। पाणिनेरनन्तरं वार्तिककारः कात्यायनापरनामा वररुचिरासीत् । स एव प्राकृतव्याकरणस्य प्रणेता भवेदिति प्रतीमः। कस्यचन महाकाव्यस्य निर्माता, कश्चनापर एव कात्यायनः श्रूयते। नन्दराजस्य मन्त्रिमण्डले कश्चन कात्यायनो वररुचिः पुरोहित आसीत्। अयमेव राजनीतिज्ञो भवेदिति प्रतीयते। कौटिल्यात् किञ्चिदेव प्राचीनः तत्समकालीनो

वा भवेदिति सुव्यक्तमेव।

51. संस्कृतशिक्षायां प्रथमा बाधा तावदियं यत् अस्यां शिक्षार्थिनां प्रायेणाऽभाव एव वर्तते। संस्कृतशिक्षाक्षेत्रे वर्तमानस्य शिक्षार्थिनाम् अभावस्य यदा कारणम् अन्विष्यते, तदाऽस्माभिः एष एव निष्कर्षः प्राप्यते यत् सम्प्रति लोकैः स्वीकृतं शिक्षाया उद्देश्यमेव यत् विविध ोपभोगसाधनानाम् अभिवृद्धये धनार्जनस्य सामर्थ्य-प्राप्तिः। सा च संस्कृतशिक्षापेक्षया इतरशिक्षाभिः इदानीम् अनायासेन स्वल्पायासेन वा भवितुं शक्नोति।

52. आलोकयतु तावत् कल्याणाभिनेविशी लक्ष्मीमेव प्रथमम्। इयं हि लक्ष्मीः क्षीरसागरात् पारिजातपल्लवेभ्यो रागम्, इन्दुकलात् एकान्तवक्रताम्, उच्चैःश्रवसः चञ्चलताम्, कालकूटान्मोहनशक्तिम्, मदिराया मदम्, कौस्तुभमणेरतिनैष्ठुर्यम् इत्येतानि सहवास-परिचय-वशात् विरह-विनोद-चिह्नानि गृहीत्वेवोद्गता। लब्धापि खलु दुःखेन परिपाल्यते। न परिचयं रक्षति। नाभिजनम् ईक्षते। न रूपम् आलोकयते। न कुलक्रमम् अनुवर्तते। न शीलं पश्यति। न वैदग्ध्यं गणयति। न श्रुतम् आकर्णयति। न धर्मम् अनुरुध्यते। न त्यागम् आद्रियते। न विशेषज्ञतां विचारयति। नाचारं पालयति। न सत्यम् अनुबुध्यते। गन्धर्वनगरलेखेव पश्यत एव नश्यति।

53. एष भगवान् मणिः आकाशमण्डलस्य, चक्रवर्ती खेचरचक्रस्य, कुण्डलम् आखण्डलदिशः, दीपको ब्रह्माण्डभाण्डस्य, प्रेयान् पुण्डरीकपटलस्य, शोकविमोकः कोकलोकस्य अवलम्बो रोलम्बकदम्बस्य, सूत्रधारः सर्वव्यवहारस्य इनश्च दिनस्य। अयमेव अहोरात्रं जनयति, अयमेव वत्सरं द्वादशसु भागेषु विभनक्ति, अयमेव कारणं षण्णाम् ऋतूनाम्, एष एव अङ्गीकरोति उत्तरं दक्षिणं चायनम्, एनेनैव सम्पादिता युगभेदाः।

54. संस्कृतभाषा देवभाषा, प्रायः सर्वासां भारतीयभाषाणां जननी, प्रादेशिकभाषाणाञ्च प्राणभूता। यथा प्राणी अन्नेन जीवति, परन्तु वायुं विना अन्नमपि जीवनं रक्षितुं न शक्नोति, तथैव अस्मद् देशस्य कापि भाषा संस्कृतभाषावलम्बनं बिना जीवितुमक्षमेति। निःसंशयम् अस्यामेव अस्माकं धर्मः, अस्माकमितिहासः, अस्माकं भूतं भविष्यच्च सर्वं सुसन्निहितम् अस्ति।

55. चैतशुक्लप्रतिपदाया धार्मिकमहत्त्वमपि वरीवर्ति। अस्यामेव तिथौ वसन्तनवरात्रस्यारम्भो भवति। अनेन कारणेनापि एतस्याः तिथेर्महत्त्वमस्ति। नवरात्रोऽयं लोके चैतीदशहरेत्याख्यया प्रसिद्धोऽस्ति। दक्षिणभारते खल्वियं प्रतिपदा तिथिः 'गुडी पडवा' इत्युच्यते। अस्यां तिथौ नवरात्रमाश्रित्य दुर्गापूजनपुरश्चरणभूतं कलशस्थापनं देव्यावाहनं च भवतः। अद्यैव लोकः ध्वजारोपणं करोति। नवरात्रे हि चैत्रशुक्लप्रतिपदातो ह्यारभ्य नवदिवसीयं नवदुर्गापूजनं भवति। नवम्यां दुर्गायाः प्रतिमाविसर्जनं क्रियते।

56. गुरुनानकः स्त्रीजनस्य सम्मानस्य उदग्रसमर्थकः। गुरुनानकात्पूर्वं न हि कोऽपि एतादृशो धर्मोपदेष्टा यः स्त्रीणां मुक्त्यै सम्मानाय च आत्यन्तिकं कृतवान्। अन्येऽपि सिखधर्मस्य गुरवः स्त्रीणां प्रतिष्ठायै बहुकृतवन्तः। सामाजिके आचरणे स्त्रीजनान् प्रति भेदपरः दुर्व्यवहारः सर्वथा निषिद्धः गुरुभिः। एतस्य निषेधस्य पराकाष्ठा गुरुगोविन्दसिंहकाले जाता। गुरुनानकः बालानां हत्यायाः सतीप्रथायाश्च घोरविरोधी आसीत्। विधवाविवाहस्य पोषकः स आसीत्।

57. प्राचीनं भारतं यैः विद्वद्रत्नैः गौरवान्वितं परिज्ञायते, तेषु अन्यतमः तक्षशिलादीक्षितः